मान मन्दिर बरसाना

मासिक पत्रिका, फरवरी २०२४, वर्ष ०८, अंक ०२

भक्त चरित्र विशेषांक

मूल्य १०/-

पूज्यश्री बाबा महाराज के जन्मोत्सव की झलकियाँ

अनुक्रमणिका

विषय- सूची — पृष्ठ- संख्या

१ 'बाबाश्री' के ब्रजागमन से बदला 'ब्रज' ०५

२ साधु-संत सेविका आदर्श ब्रजवासिनी 'श्रीमतीयमुनादेवी'.१०

३ सच्ची श्रीकृष्ण-प्रेमिका 'कान्हूपात्रा'.....१३

४ महाराष्ट्र की मीरा 'श्रीसक्खूबाई'.....१५

५ जनाबाई की भक्ति-शक्ति.....२०

६ सच्चे गुरु-भक्त की कथा.....२२

७ सहनशील व कीर्तननिष्ठ 'श्रीसदन कसाईजी'.....२४

८ आस्थावान बाल-आराधक 'ज्योतिपंतजी'.....२९

९ अनन्याश्रित भक्त श्रीदामापन्तजी.....३२

।। राधे किशोरी दया करो ।।

हमसे दीन न कोई जग में,
बान दया की तनक ढरो ।
सदा ढरी दीनन पै श्यामा,
यह विश्वास जो मनहि खरो ।
विषम विषयविष ज्वालमाल में,
विविध ताप तापनि जु जरो ।
दीनन हित अवतरी जगत में,
दीनपालिनी हिय विचरो ।
दास तुम्हारो आस और की,
हरो विमुख गति को झगरो ।
कबहूँ तो करुणा करोगी श्यामा,
यही आस ते द्वार पर्यो । – *पूज्यश्री बाबामहाराज कृत*

संरक्षक- श्रीराधामानबिहारीलाल

प्रकाशक – राधाकान्त शास्त्री, मानमंदिर सेवा संस्थान,
गह्वरवन, बरसाना, मथुरा (उ.प्र.)

mob. राधाकांत शास्त्री 9927338666

(Website :www.maanmandir.org)

(E-mail :info@maanmandir.org)

श्रीमानमंदिर की वेबसाइट www.maanmandir.org के द्वारा आप प्रातःकालीन सत्संग का ८:३० से ९:३० बजे तक तथा संध्याकालीन संगीतमयी आराधना का सायं ६:०० से ८:०० बजे तक प्रतिदिन लाइव प्रसारण देख सकते हैं ।

परम पूज्यश्री रमेश बाबा महाराज जी द्वारा सम्पूर्ण भारत को आह्वान –

"मजदूर से राष्ट्रपति और झोंपड़ी से महल तक रहने वाला प्रत्येक भारतवासी विश्वकल्याण के लिए गौ-सेवा-यज्ञ में भाग ले ।"

*** योजना ***

अपनी आय से १ रुपया प्रति व्यक्ति प्रतिदिन निकालें व मासिक, त्रैमासिक, अर्धवार्षिक अथवा वार्षिक रूप से इकट्ठा किया हुआ सेवाद्रव्य किसी विश्वसनीय गौसेवा प्रकल्प को दान कर गौरक्षा कार्य में सहभागी बन अनन्त पुण्य का लाभ लें । हिन्दूशास्त्रों में अंशमात्र गौसेवा की भी बड़ी महिमा का वर्णन किया गया है ।

विशेष:- इस पत्रिका को स्वयं पढ़ने के बाद अधिकाधिक लोगों को पढ़ावें जिससे आप पुण्यभाक् बनें और भगवद्-कृपा के पात्र बनें । हमारे शास्त्रों में भी कहा गया है –

सर्वे वेदाश्च यज्ञाश्च तपो दानानि चानघ । जीवाभयप्रदानस्य न कुर्वीरन् कलामपि ।। (श्रीमद्भागवत३/७/४१)

अर्थ:- भगवत्तत्त्वके उपदेश द्वारा जीव को जन्म-मृत्यु से छुडाकर उसे अभय कर देने में जो पुण्य होता है, समस्त वेदों के अध्ययन, यज्ञ, तपस्या और दानादि से होनेवाला पुण्य उस पुण्य के सोलहवें अंश के बराबर भी नहीं हो सकता ।

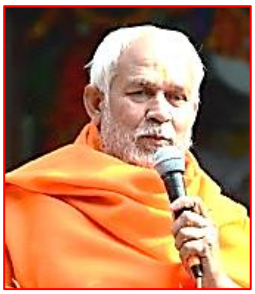

प्रकाशकीय

स्वयं भगवान् भी भक्तों की आधीनता स्वीकार करते हैं, फिर क्यों हम भक्तों में अभाव कर अपने विनाश का मार्ग तैयार कर लेते हैं । भक्तिपथ पर आरुढ़ हो भक्तजन कितने ही जीवों को भगवत्प्रेमी बनाकर उनके कल्याण के कारण बनते हैं । 'भक्तों की सेवा' का सुख लेने के लिए 'भगवान्' भक्तों के प्रारब्ध को समाप्त नहीं करते हैं और उनकी सेवा में लग जाते हैं, यथा - माधवदासजी को संग्रहणी की अवस्था में 'भगवान्' ने उनके मल-मूत्र साफ किए, इस तरह 'भगवान्' भी भक्त हैं; उनसे बड़ा भक्त कौन हो सकता है ? तुलसीदासजी की कुटिया में पहरा देकर उन्होंने रामायण को नहीं चुराने दिया । भक्ति से प्रारब्ध के कठिन कुअंक भी समाप्त हो जाते हैं, फिर भी 'भगवान्' भक्त-सेवा के लिए सदा तत्पर रहते हैं । भक्तों की जाति-कुल आदि कभी नहीं पूछना चाहिए । भक्तों से कदाचित् कोई त्रुटि हो भी जाए, तो भी वे निन्दनीय नहीं हैं । सदन कसाई ने अपने पूर्व जन्म में एक कसाई से सत्य बोलकर कि गाय इधर से गयी है, बहुत बड़ा अपराध कर लिया था, फिर भी भगवान् उनके माँस तौलने के बाँट बन गये; एक ही सालिगराम से वे सभी को उनकी आवश्यकतानुसार माँस तौल दिया करते थे । भगवान् के इस भक्त-प्रेम को न समझने वाले बहुत बड़े अपराधी बन सकते हैं । जयदेवजी में अभाव करने वाले उनके हत्यारों को पृथ्वी निगल गई थी ।

विषम परिस्थितियों में भी भक्तों का आनन्द नष्ट नहीं होता, उनके हृदय में अगाध रस होता है; काम-क्रोधादि विकार वहाँ सम्भव ही नहीं हैं । सच्चे भक्त हर परिस्थिति में समता का दर्शन करते हैं ।

जैसें राखहु तैसें रहौं ।
जानत हौ दुःख-सुख सब जन के, मुख करि कहा कहौं ॥
कबहुँक भोजन लहौं कृपानिधि, कबहुँक भूख सहौं ।
कबहुँक चढ़ौं तुरंग महागज, कबहुँक भार बहौं ॥
कमलनयन घनस्याम मनोहर, अनुचर भयौ रहौं ।
'सूरदास' प्रभु भक्त-कृपानिधि, तुम्हरे चरन गहौं ॥

भगवान् कृपा के समुद्र हैं, निश्चित ही वे भक्तजनों को अपने चरणों का सानिध्य प्राप्त कराते हैं ।

आशा है, हमारी मासिक पत्रिका "मानमन्दिर बरसाना" के नियमित पाठकों को भक्ति, भक्त, भगवन्त की सरस कथाओं-प्रसंगों से भक्तिपथ पर आरुढ़ होने का मंगलमय अवसर अवश्य मिलेगा ।

प्रबन्धक
राधाकान्त शास्त्री
श्रीमानमंदिर सेवा संस्थान ट्रस्ट

'बाबाश्री' के ब्रजागमन से बदला 'ब्रज'

श्रीप्रकाशजी (राधाकान्त भैयाजी के पिताजी) द्वारा श्रीबाबामहाराज के सम्बन्ध में कथित संक्षिप्त संस्मरण

मानपुरनिवासी 'श्रीप्रकाशजी' के शब्दों में –

श्रीबाबामहाराज के निवास करने के पूर्व मानगढ़ चारों ओर से टूटा-फूटा खण्डहर था, यहाँ डकैत आया करते थे, उनका मुखिया जहान डाकू यहाँ आता था; उसके साथ और भी बहुत-से डकैत थे । इसके पहले मानगढ़ की ऐसी स्थिति थी कि मन्दिर के नाम से बहुत-सी जमीन-जायदाद थी । साधु-सन्त यहाँ रहते थे । दयासिंह नामक साधु यहाँ का महन्त था, उसी ने इस मन्दिर को उजाड़ दिया था । यहाँ पहले राधामानबिहारीलाल की अष्टधातु की बनी मूर्ति थी, उस मूर्ति के दर्शन मैंने किए थे । यह महन्त लोभी और भोगी प्रवृत्ति का था । इसके गुरुदेव ने अपने इस इन्द्रिय-लोलुप शिष्य को मानगढ़ का महन्त बना दिया, वे नहीं जानते थे कि उनका चेला ऐसा घोर विषयी निकलेगा । मानगढ़ के नाम से तीन सौ बीघा जमीन थी । ३५-४० बीघा जमीन तो मानपुर में ही थी, चिकसौली और डभारा में भी जमीन थी, बाहर जुरहरा तक में जमीन थी । महन्त दयासिंह ने उस सब जमीन को बेच दिया, अनाचार किया और साधु बनकर भी एक स्त्री से विवाह कर लिया और विवाह करके डभारा में जाकर रहने लगा । ठाकुरजी की सेवा-पूजा दूसरे साधु मन्दिर में करते थे लेकिन उसने अष्टधातु की राधामानबिहारीलाल की तीन फुट की मूर्ति को भी चुरा लिया और डभारा जाकर अपने घर में एक भूसे के कोठरे में उस प्रतिमा को छिपा दिया तथा यहाँ आकर हल्ला मचा दिया कि ठाकुरजी की मूर्ति चोरी हो गई । उसके जाने के बाद मन्दिर में दूसरे साधु आ गये । मूर्ति चोरी होने के बाद मानमन्दिर वीरान हो गया और यहाँ बहुत भय लगता था, कोई यहाँ आता नहीं था । दयासिंह ने मूर्ति चुराने के बाद कहीं उसको बेच दिया, पता ही नहीं चल पाया कि उसने कहाँ बेचा ? ठाकुरजी की चोरी होने के बाद जब मन्दिर उजड़ गया तो यहाँ डकैत आने लगे, जहान डाकू आने लगा । उसके साथ और भी बहुत-से डकैत थे, जो आसपास के गाँवों में, बरसाना में चोरी-लूटपाट आदि करते थे और मानगढ़ में ही रुकते थे । मानगढ़ खण्डहर था, वीरान हो गया तो यहाँ आने में भी लोग डरने लगे । भूत-प्रेत और साँप-बिच्छू यहाँ रहने लगे । उस समय मेरी आयु १४-१५ वर्ष थी । उसके बाद यहाँ लाड़लीदासजी आये । वे हमारे ज़माने के पढ़े-लिखे थे, पढ़ने-लिखने के कारण से ही हम भी उनके सम्पर्क में आये किन्तु उनका तो नया-नया वैराग्य था, मैं उनसे मिला तो वे रोने लगे । मैंने सोचा कि ये मुझे क्या पढ़ायेंगे, ये तो रो रहे हैं । उस समय मुझे नहीं पता था कि वैराग्य क्या होता है ? लाड़लीदास के बाद फिर बाबा सन् १९५३ में यहाँ आये थे । जब बाबा मान मन्दिर में आये तो मेरी उनसे बातचीत हुई, बाबा अट्टा पर बैठे थे । बाबा की आयु उस समय पन्द्रह वर्ष की थी और मैं भी तब पन्द्रह वर्ष का ही था । एक वर्ष बाद फिर बाबा यहाँ से चले गये थे । उसका कारण यह था कि माताजी प्रयाग से बाबा को ढूँढने के लिए आ गयी थीं तो उनसे बचने के लिए बाबा यहाँ से चले गये । माताजी को बाबा नहीं मिले तो फिर वे भी यहाँ से चली गयीं । उस समय गह्वर वन में कान्ति चन्द्र जी नामक महात्मा रहते थे । उस समय जब बाबा मान मन्दिर में रहे थे तब तो बाबा से दो-चार दिन ही मेरी बात हुई थी । उस समय मुझे यह नहीं पता था कि बाबा स्थायी रूप से आगे चलकर यहाँ रहेंगे । एक वर्ष बाद बाबा पुनः यहाँ आ गये । उस समय बाबा जयपुर, अलवर आदि भ्रमण करने गये, वहाँ बाबा ने बहुत प्रचार किया । उसी जमाने में बाबा चित्रकूट के जंगलों में भी गये थे । वहाँ सती अनुसुइया, विराध कुण्ड, ददरी और भी बहुत से स्थानों पर गये थे । उसके बाद फिर १९५४ में बाबा यहाँ

वापस आये, उसके बाद फिर बाबा कहीं नहीं गये, अखण्ड रूप से ब्रजवास किया । १९५४ में आने के बाद से बाबा ने भिक्षा माँगना आरम्भ किया । दिन में भिक्षा के लिए चिकसौली जाते थे और शाम को मानपुर में जाते थे । उस समय मानपुर के लोग खेती के कामों में ही लगे रहते थे और कोई कीर्तन नहीं करता था । बाबा ने मानपुर में कीर्तन शुरू करवाया । मेरी तरह चार-छः लड़कों को लेकर बाबा कीर्तन करवाने लगे उस समय मेरी उम्र १४-१५ साल थी । धीरे-धीरे कीर्तन बढ़ता गया । पाँच-छः साल तक लगातार कीर्तन हुआ । एक कुँए के पास बैठकर बाबा कीर्तन करते थे, ढोलक भी नहीं थी । पहले झाँझ लाये गये, झाँझ से कीर्तन किया, कुछ समय बाद ढोलक से कीर्तन चालू हुआ । कीर्तन चलता रहा, फिर गाँव में कुछ ऐसी स्थिति उत्पन्न हो गयी कि कीर्तन का विरोध होने लग गया । बाबा ने कुछ दिन हमारे घर में कथा भी की । जब गाँव में कीर्तन का विरोध होने लगा तो बाबा ने मान मन्दिर में कीर्तन चालू किया । मान मन्दिर की दीवाल गिर गयी थी । कुछ दिन बाद यहाँ चिकसौली-मानपुर के चालीस-पचास लड़के आने लगे । उनको लेकर बाबा ने कीर्तन आरम्भ किया । कीर्तन करने के लिए मैंने बाबा के लिए एक झोंपड़ी बनायी । कीर्तन के लिए ढोलक मँगाई गयी, फिर एक हारमोनियम भी आ गया । हम ढोलक की मरम्मत भी करने लग गये, ढोलक का पल्ला भी मढ़ने लगे । उस समय गरीबी बहुत थी, पैसा था नहीं, इसलिए मैंने अपने हाथों से ही मान मन्दिर पर तखत भी बनाये, तखत के पाये बनाये । मान मन्दिर में उस समय साँप बहुत रहा करते थे । बच्चे भी बाबा से पढ़ने के लिए आया करते थे । उसी समय बाबा ने स्वयं ही संस्कृत पढ़ना चालू किया । मैं तब प्रतिदिन मान मन्दिर आया करता था । बाबा के आने के लगभग तीन-चार साल बाद गह्वर वन में उनकी कुटी बनी । कुटी के साथ ही एक चबूतरा भी था, उस चबूतरे पर बैठकर बाबा ने गह्वर वन में अखण्ड कीर्तन करना चालू किया । उस कीर्तन का भी लोग विरोध करने लगे । एक-दो साधु बाबा के अखण्ड कीर्तन में सहयोग करते थे । उनमें से एक साधु सीह-पलसों का था । उसी ज़माने में मेरा विवाह हुआ और राधाकान्त से भी बड़े मेरे दो पुत्र थे, चेचक से उनकी मृत्यु हो गयी थी । इस घटना से मुझे बहुत कष्ट रहता था । मेरी दुःखद-स्थिति देखकर बाबा मुझे बहुत समझाया करते थे, धैर्य बँधाया करते थे, इस कारण से बाबा के साथ मेरा सम्बन्ध और गहरा हो गया । उस समय बाबा रोज मेरे घर पर जाते और मुझे समझाया करते थे । बाबा ने भागवत के वेणुगीत के **'बर्हापीडं नटवर वपुः...'** श्लोक पर छः महीने तक मेरे घर में कथा कही और फिर भी उसकी सम्पूर्ण व्याख्या नहीं हो सकी । उसी ज़माने में बाबा ने संस्कृत का अध्ययन करना चालू किया । पहले तो बाबा गाजीपुर में संस्कृत पढ़ने के लिए जाया करते थे । कभी-कभी हम भी बाबा के साथ वहाँ चले जाया करते थे । बाबा प्रियाशरणजी पहले पीली पोखर पर रहा करते थे । हम लोग उस समय हल से खेती किया करते थे तो देखते थे कि बाबा प्रियाशरणजी पीलीपोखर से हमारे खेतों तक रोज दौड़ लगाने आते थे । हमलोग उनसे 'राधे-राधे' करते थे तो वे पूछते – 'बच्चो ! ठीक हो' तो हम लोग कहते थे 'हाँ बाबा' । हम लोगों को देखकर वे बहुत हँसते थे । जब बाबा संस्कृत पढ़ते थे तो पढ़ाई में इतना व्यस्त रहते थे कि किसी से बात नहीं करते थे, मौन रहा करते थे । कभी कुछ कहना हो तो लिखकर बता देते, मुख से नहीं बोलते थे । दिन-रात बाबा इतना पढ़ते थे कि उनकी बायीं आँख में दर्द होता तो उसको हाथ से बन्द करके दाहिनी आँख से पढ़ते थे और जब दाहिनी आँख में दर्द होता तो उसको हाथ से बन्द करके बायीं आँख से पढ़ा करते थे । 'बाबा' मन्दिर की दीवारों पर श्लोक लिखा करते थे । उस समय मानमन्दिर में बिजली-पानी का साधन तो नहीं था । हम बहुत से दीपक (लुक्का) लाकर बाबा को देते थे, उसी की रोशनी में बाबा रात भर पढ़ा करते थे । गह्वरवन में कुँए से बालक लोग मिट्टी की घड़िया में पानी भरकर ऊपर मान मन्दिर पर लाया करते थे ।

पहले बाबा अपनी माताजी को यहाँ रुकने नहीं देते थे तो प्रियाशरण बाबा ने उनसे कहा कि ऐसा क्यों करते हो, उनको भी यहाँ रहने दो । उनकी आज्ञा से फिर माताजी भी यहाँ रहने लगीं । लगभग ५२ वर्षों तक माताजी ने यहाँ वास किया । बाबा के रहने के दो-तीन साल बाद ही माताजी यहाँ रहने लगी थीं । माताजी छुआछूत बहुत मानती थीं, किसी का बनाया भोजन नहीं करती थीं, वे

अपना भोजन स्वयं ही बनाया करती थीं । बाबा की मधुकरी की रोटी भी कभी नहीं ग्रहण करती थीं ।

जब बाबा ने गह्वरवन में अखण्ड कीर्तन करना चालू किया तो यहाँ के साधु ही उस कीर्तन का विरोध करने लगे थे । उन्होंने गाँव के लोगों से बाबा की शिकायत की कि ये रात भर ढोलक पीटते हैं, हम लोगों को सोने नहीं देते हैं । विरोध होने के कारण फिर बाबा को कीर्तन बन्द करना पड़ा था । उस समय मैं भी बाबा के साथ कीर्तन करता था । मौनी बाबा और पण्डित हरिश्चन्द्रजी जैसे महात्मा भी तब यहाँ गह्वरवन में रहते थे । पण्डितजी कुआँ पर नहाते थे, शौच के लिए दोहनीकुण्ड की ओर जाया करते थे । गह्वरवन में वे कभी शौच करने नहीं गये । बाबा 'पण्डितजी' की कुटिया पर उनकी सेवा करने जाते थे, उनकी अँगीठी में कोयला भरते थे, राख को हटा दिया करते थे और एक नीचे की कोठरी में तखत के नीचे सो जाया करते थे । मौनी बाबा के पधारने पर बाबा ने उनके लिए श्रीमद्भागवत सप्ताह की कथा भी कही थी । वह बाबा की सबसे पहली भागवत सप्ताह कथा थी । दूसरी कथा बाबा ने गोवर्धन में मैनाबाई धर्मशाला में कही थी, वहाँ एक लड़की 'सत्तो' रहती थी । उसके बाद कामाँ के चौबेजी ने गह्वरवन में बाबा के द्वारा कथा कराई । उस समय गह्वरवन के एक सन्त गोवर्धनदासजी के पधारने के उपलक्ष्य में भी वह कथा हुई थी । एक और भागवत कथा बाबा ने ऊँचागाँव में ब्रह्मचारीजी की कुटिया पर कही थी । उस समय साधु-समाज बाबा का बहुत अधिक विरोधी था । बाबा द्वारा की गयी भागवत कथाओं का भी उन लोगों ने बहुत विरोध किया, बाबा के विरोध में बड़ी-बड़ी पंचायतें करायीं ।

जब बाबा मानमन्दिर पर रात्रि को कीर्तन करते थे, उस समय गाँव के बहुत से लड़के यहाँ आते थे । उस कीर्तन का भी लोगों ने बहुत विरोध किया । किसी ने घात (अग्नि ज्वाला) भी चलायी थी, कीर्तन करते समय दान गढ़ से वह घात आई और मान मन्दिर में आकर कीर्तन वालों के ऊपर घूमती रही, फिर वह वहाँ से चली गयी और नष्ट हो गयी । उस समय रात को आठ बजे से शुरू होकर ११-१२ बजे तक कीर्तन होता रहता था । जो लड़के कीर्तन करने आते थे, उनके घर वाले उन्हें यहाँ आने से रोका करते थे किन्तु सबको बाबा के कीर्तन का ऐसा रंग चढ़ा था कि रोकने पर भी लड़के नहीं रुकते थे । घर वालों ने अपने लड़कों को रोकने के लिए उन्हें रोटी देना बन्द कर दिया तो उस समय सखीशरण बाबा गाँव से भिक्षा माँगकर रोटी लाया करते थे, उन्हीं की लायी रोटी सब लड़के मानमन्दिर पर खाया करते थे । जो लड़के मानमन्दिर में कीर्तन करने आते थे तो बाबा उनको स्कूल की पढ़ाई भी कराया करते थे, इसलिए गाँव के लोग सोचते थे कि चलो, हमारे बच्चे बाबा के पास जाकर पढ़-लिख जायेंगे लेकिन जब उन लड़कों ने शादी करने से मना कर दिया तो फिर उनके घर वाले उनके मानमन्दिर में जाने का विरोध करने लगे । कई लड़कों की उनके घर वालों ने शादी कर दी तो वे मानमन्दिर से अलग हो गये ।

'श्रीबाबामहाराज' मानमन्दिर के रात्रि-कीर्तन के समय बीच रास मण्डल पर बहुत तेज गति से गोलाकार घूमते हुए घंटों तक नाचा करते थे । उस समय घंटे, बेला, ताशे, ढोलक आदि जो वाद्य बजाये जाते, उनकी ध्वनि गोवर्धन तक सुनाई पड़ती थी । उस समय कीर्तन में तीन-चार ताशे बजते थे, तीन-चार ढोलकें बजती थीं, बहुत तेज ध्वनि करने वाले बेला छतों पर बजते थे, ऐसे बेला आजकल नहीं बनाये जाते हैं । बालक लोग बड़े जोर से बेला बजाया करते थे । उस कीर्तन का विरोध भी बहुत हुआ, विरोध होने पर पुलिस भी कई बार मानमन्दिर में आयी । बाबा ने कई बार पुलिस वालों को बहुत फटकारा । जब 'बाबा' मानपुर में कीर्तन कराने के लिए आते थे तो हम लोग बाबा का अधिक सहयोग करते थे, इसलिए गाँव के कई लोग हमारा विरोध करने लगे, इसके कारण बहुत लड़ाई-झगड़े भी हुए । चिकसौली के ज्ञानीजी को किसी ने पत्थर मारा, उनके चोट लग गयी थी, लड़ाई में फरसा भी चला, हमको जेल तक जाना पड़ा, मुकदमेबाजी भी हुई ।

बाबा को मानमन्दिर से हटाने के लिए कई पंचायते हुईं । एकबार एक पंचायत बरसाने में हुई । उस समय शास्त्रीजी नामक एक साधु मानमन्दिर में रहा करते थे, उनको भी पंचायत में बुलाया गया, वे वहाँ डर गये किन्तु एक गोपीचन्द्र नामक गोस्वामीजी ने वहाँ सबको फटकार दिया । उनकी फटकार से सब लोग चुप हो गये, फिर कोई

बाबा के विरुद्ध कुछ नहीं बोल सका । उसके बाद गह्वरवन में बाबा के विरुद्ध कई गाँवों की पंचायत हुई । उस समय 'बाबा' ने सखीशरणबाबा को मानमन्दिर की चाबी देकर उस पंचायत में भेजा और कहा कि यदि लोग मुझे मानमन्दिर से निकल जाने के लिए कहें तो यह मानमन्दिर की चाबी उनको दे देना । 'सखीशरणजीमहाराज' ताला की चाबी हाथ से घुमाते हुए वहाँ टहलते रहे लेकिन किसी ने उनसे चाबी नहीं माँगी ।

जब बाबा मानगढ़ आये थे, उस समय गह्वरवन बहुत घना था । लकड़ियों की वजह से फिर लोगों ने इसको काटना शुरू कर दिया, साधु भी काटा करते थे । बाबा ने ही गह्वरवन की रक्षा की । पर्वतों को भी खनन से बचाया । सबसे पहले ऊँचागाँव के पर्वत का खनन हो रहा था, उत्तरप्रदेश सरकार के एक मंत्री 'बरसाना, श्रीजी मन्दिर' में आये थे, बाबा ने उनसे कहकर ऊँचागाँव के पर्वत को खनन से बचाया । श्रीजी का जो वर्तमान मन्दिर है, ये मेरे सामने ही बना था, सेठ हरगूलाल ने बाबा प्रियाशरणजी की प्रेरणा से इसका नव निर्माण करवाया, उसके बाद बाबा महाराज की प्रेरणा से इसका नया स्वरूप बना है । पहले बाबा 'श्रीजी मन्दिर' में उत्सवों पर मृदंग बजाने जाया करते थे, मैं भी उनके साथ जाया करता था । रंगीली होली के समय बसंत पंचमी से रंगीली तक सवा महीने के लिए मृदंग बजाने जाते थे और राधाष्टमी के समय भी मृदंग बजाते थे । 'बाबा' गह्वरवन में अपनी कुटिया पर रहते समय और मानमन्दिर में रहते समय तानपूरा बजाया करते थे । उस समय बाबा किसी से बात नहीं करते थे ।

एकबार बाबा को मानमन्दिर में रहते समय एक अदृश्य रूप से रहने वाले महात्मा के दर्शन हुए । वे महात्मा बहुत लम्बे थे, अचानक बाबा को वे दिखायी पड़े, बाबा ने उनसे कहा राधे श्याम और उन्होंने उत्तर में सीता राम कहा । थोड़ी देर में वे गायब हो गये, बाबा उनको देखने गये तो फिर दिखायी नहीं पड़े ।

एकबार बाबा मान मन्दिर में रहते समय गम्भीर रूप से बीमार हो गये । उनको बहुत तेज बुखार हो गया । उस समय बाबा यहाँ अकेले ही रहते थे, मन्दिर में कोई और नहीं रहता था, बाबा का किसी से कोई ख़ास परिचय भी नहीं था । जब बाबा बीमार हो गये तो एक तखत पर लेटे थे, उठा-बैठा भी नहीं जा रहा था । उस समय यहाँ कोई पानी देने वाला भी नहीं था । हमको भी इस बारे में कुछ पता नहीं था । हम लोग तो उस समय हल जोतने के लिए अपने खेत में चले जाया करते थे । बाबा को बहुत जोर से प्यास लगी थी, उसी समय एक अनजान आदमी आया और बाबा से पूछा कि कैसे पड़े हो ? बाबा ने कहा कि मैं बीमार हूँ, बहुत प्यास लगी है । उस आदमी ने बाबा को पानी पिलाया । पानी पीते ही बाबा के शरीर में जान आ गयी । पहले तो बाबा उठ-बैठ भी नहीं पा रहे थे किन्तु उस व्यक्ति के दिए जल को पीते ही अचानक से शरीर में शक्ति आ गयी । पानी देने के बाद ही वह आदमी वहाँ से चला गया, बाबा उसको देखने के लिए मन्दिर के दरवाजे तक भागे किन्तु वह दिखायी नहीं दिया । फिर बाबा को बड़े जोर से भूख लगी और वे स्वयं ही मानपुर में जाकर भिक्षा में रोटी माँगकर लाये ।

मानपुर गाँव में बाबा के आने से पहले भजन-कीर्तन करना कोई जानता ही नहीं था । बाबा ने ही हमारे गाँव के लोगों को कीर्तन करने की शिक्षा दी, कीर्तन का महत्त्व बताया और उसका जोर-शोर से प्रचार किया । हम लोगों को भी बाबा ने कीर्तन करना सिखाया, ढोलक आदि वाद्य बजाना सिखाया, हमारे गाँव की स्त्रियों को भी बाबा ने कीर्तन करना और ढोलक बजाना सिखाया, बाबा से सीखकर मानपुर की स्त्रियाँ कीर्तन करने लगीं । पहले तो लोग बरसाना की परिक्रमा भी नहीं किया करते थे । इस परिक्रमा को भी बाबा ने शुरू किया । बाबा ने ही बरसाने में प्रभात फेरी चलाई ।

कुछ समय तक 'बाबाश्री' गह्वरवन स्थित गोपाल कुटी में भी रहे थे । वहाँ रहते समय बाबा मन्दिर की आरती के समय नहीं जाते थे क्योंकि उसी समय बाबा अपने कमरे में तानपूरा बजाते हुए राधा-माधव की लीला के पदों का गान करते थे । उस समय प्रियाशरण महाराज ने बाबा से कहा कि मन्दिर में रहते समय वहाँ के नियम का पालन करना चाहिए, आरती में सब जाते हैं और तुम नहीं जाओगे तो लोगों को बुरा लगेगा, या तो उस स्थान को छोड़ दो और यदि रहो तो आरती में अवश्य जाओ । अपने गुरुदेव

की आज्ञा सुनकर फिर तो बाबा जब तक गोपाल कुटी में रहे, आरती में नियम से जाते रहे ।

एक बार मैं गोवर्धन में वहाँ के सिद्ध महात्मा पण्डित गया प्रसाद जी के दर्शन करने गया और बताया कि मैं बरसाना से, रमेश बाबा महाराज के पास से आया हूँ तो वे बड़े प्रसन्न हुए और कहने लगे – 'अरे बेटा ! बाबा को कभी मत छोड़ना ।'

मानपुर के एक व्यक्ति थे रघुवीर भगत जी । एक बार वे बहुत गम्भीर रूप से बीमार पड़ गये तो उन्होंने बाबा के पास आने वाले भक्तों से कहा कि बाबा से कह देना कि मुझे देख जाएँ । उस समय लोग इस बात को बाबा से कहना भूल गये । मैंने बाबा से यह बात कही तो बाबा हम कीर्तन करने वाले भक्तों को लेकर उनके घर पहुँचे । उस समय उनका अन्तिम समय आ गया था, वे मूर्च्छा में थे । जब बाबा उनके घर के पास पहुँचे तो दूर से ही उनकी उलटी साँस चलने की आवाज आ रही थी । बाबा ने उनकी हालत देखकर पद **'मदन गोपाल शरण तेरी आयो ।'** गाना आरम्भ किया । जैसे ही बाबा ने अन्तिम पंक्ति गाई –

'श्रीभट के प्रभु दियौ अभय पद,
यम डरप्यौ जब दास कहायो ।'

वे बिना किसी की सहायता के उठकर बैठ गये और हाथ के इशारे से बाबा को अपनी ओर बुलाया और उनका हाथ लेकर अपने सिर पर रख लिया । जब बाबा ने देखा कि अब ये ठीक हो गये हैं तो फिर वे पद पूरा गाकर मान मन्दिर चले आये । बाबा के मान मन्दिर पहुँचते ही भगतजी ने अपना शरीर छोड़ दिया । उस समय मैं उनके पास ही बैठा था, शरीर छोड़ते समय उन्होंने तीन बार कहा – राम, राम, राम । जब हम लोग उनका अन्तिम संस्कार कर रहे थे तो गोपाल कुटी के महात्मा ने हम लोगों को बताया कि भगतजी तो रात को हमारे पास आये थे और उन्होंने मुझे आवाज लगायी थी ।

मानमन्दिर से पहली बार सन् १९८८ से ब्रजयात्रा शुरू हुई । उस समय मानमन्दिर में बहुत गरीबी थी । डीग के रघुवीर भगतजी ने अपना खेत गिरवी रख दिया, उन्होंने ग्यारह मन सत्तू पिसवाया, उसके लिए जौ ख़रीदा गया । सत्तू खाकर पहली यात्रा सम्पन्न की गयी । एक ट्रैक्टर यात्रा के संग चलता था, उसी पर यात्रा का सामान ढोया जाता था । पहली यात्रा में लगभग २५०-३०० लोग चले थे । नित्यानन्दजी महाराज और उनके शिष्य यात्रा में थे, बहुत जोरदार कीर्तन हुआ था । सारी रात वे लोग कीर्तन करते थे और थकते ही नहीं थे । उन्हीं दिनों की यात्रा के दौरान एक बुढ़िया की मृत्यु हो गयी किन्तु जब उसका दाह-संस्कार किया जा रहा था, उसको चिता पर लिटाया गया तो बाबा ने उसके कल्याण के लिए स्वयं कीर्तन करना आरम्भ किया और सभी यात्रियों से कहा कि यह बुढ़िया बड़ी भक्त थी, सब लोग इसके लिए कीर्तन करो । बाबा के आह्वान पर सभी लोग भाव से कीर्तन करने लगे और उस कीर्तन का यह चमत्कार हुआ कि वह बुढ़िया जीवित हो गयी । इसी प्रकार एक बार वृन्दावन में यमुना जी से पार करते समय स्टीमर का डीजल ख़त्म हो गया, स्टीमर डूबने को हुआ तो बाबा ने यमुनाजी की स्तुति गाई तो बाढ़ के पानी में से अचानक टापू जैसा प्रगट हो गया, धरती निकल आई और स्टीमर उस पर टिक गया, लोग डूबने से बच गये ।

एक बार वृन्दावन से एक सन्त 'वन महाराज' आये, वे बाबा से अमेरिका चलकर प्रचार करने की कहने लगे तो बाबा ने उनको फटकार दिया और कहा कि मैं ब्रज छोड़कर कहीं बाहर नहीं जाऊँगा ।

जब बाबा 'श्रीजी मन्दिर' मृदंग बजाने के लिए जाते थे तो एक बार वहाँ गीताप्रेस के 'हनुमानप्रसादपोद्दारजी और राधे बाबा' से भी उनकी भेंट हुई थी; बाबा की विद्वत्ता, उनकी प्रतिभा देखकर भाईजी उनको गोरखपुर ले जाना चाहते थे, उन्होंने बाबा से चलने की बहुत प्रार्थना की किन्तु बाबा ने बरसाना छोड़कर कहीं भी जाने से साफ मना कर दिया ।

सबसे पहले बाबा ने गुरु शरणानन्द जी के गुरु हरिनामदासजी के साथ ब्रजयात्रा की थी । बाबा ने उनके सामने यह दोहा कहा –

अन्तर्यामी गर्भगत साधु सुन्दरी माँहि ।
तुलसी पोसे एक के दोनों पोसें जाँहिं ॥

बाबा के मुख से यह दोहा सुनकर हरिनामदासजीमहाराज

बड़े प्रसन्न हुए, वह 'बाबा' से बहुत प्रेम करते थे, वे धरती पर ही लेटा करते थे ।

रसमन्दिर में यमुनाजी बहुत सन्त-सेवा करती थीं, वे अपने हाथ से चक्की चलाकर आटा पीसती थीं और सन्तों को भोजन कराया करती थीं । बाबा में उनकी अगाध निष्ठा थी, बाबा उनके घर जाते थे, उनको शिक्षा भी देते थे, वे बाबा को भिक्षा भी देती थीं । बाबा की प्रेरणा से रसमन्दिर में अखण्ड कीर्तन चलाया गया, इससे वहाँ सेवा में चमत्कार और वृद्धि हुई । बाबा की ही प्रेरणा से हमारे घर में भी बहुत सालों तक कीर्तन चला । 'बाबा की माताजी' की सेवा में कुटी पर काफी समय तक रसमन्दिर की किशोरी भी रहीं । यमुनाजी जब भी बीमार पड़ती थीं तो वे बाबा का चरणामृत पी लेतीं तो ठीक हो जाती थीं ।

बाबाश्री पहले मानमन्दिर में रहते समय ब्रज के स्थलों में प्रतिदिन भ्रमण करने जाया करते थे । चौमासे में बाबा पहाड़ के रास्ते राँकोली से लेकर घाटा तक पैदल चले जाया करते थे । कभी-कभी पण्डितजी भी उनके साथ जाया करते थे । वंशी भी बाबा बहुत अच्छी बजाया करते थे, वंशी पहले सदा बाबा के हाथ में ही रहती थी । मानमन्दिर में बैठकर बाबा दो घंटे तक तानपूरा भी बजाया करते थे ।

सखीशरणजीमहाराज 'श्रीबाबा' के मानगढ़ में आने के छः-सात साल बाद यहाँ आये थे । वे पहले करहला में रहा करते थे । वहाँ उनके ऊपर एक भूत लग गया, वे भूत से बहुत डरते थे । एक बार उन्होंने बाबा से बताया कि मेरे ऊपर एक भूत आता है और मुझे परेशान करता है । बाबा ने कहा कि तुम मेरे पास चले आओ । एक बार भूत ने उनकी आँख की पलकों को नोच लिया था, तब बाबा ने उनसे कहा कि तुम मेरे पास सोया करो । बाबा के कहने से वे उन्हीं के पास आ गये, एक बार बोले – 'बाबा, भूत आ गया, बाबा ने जोर से चिल्लाकर कहा – 'कहाँ है भूत ?' उस दिन के बाद से फिर कभी सखीशरणजी के ऊपर भूत नहीं आया । ऐसा चमत्कार देखकर उनकी बाबा के प्रति श्रद्धा बढ़ गयी और फिर वे करहला छोड़कर मानमन्दिर में ही रहने लगे ।

साधु-संत सेविका आदर्श ब्रजवासिनी 'श्रीमतीयमुनादेवी'

ब्रज विभूति परम पूज्यनीय श्री श्री रमेश बाबा महाराज जी विगत साठ वर्ष से अधिक पूर्व से ब्रज की पावन धरा पर अखंड वास करते हुए धाम एवम् धामवासियों की लोकोत्तर सेवा, जनकल्याण एवं श्री जी की आराधना में सतत् संलग्न हैं । श्री बाबा महाराज के दैनिक सत्संग तथा रात्रिकालीन संकीर्तन-आराधना के माध्यम से अपने आध्यात्मिक जीवन को प्रगतिशील बनाने के उद्देश्य से जो भी श्रद्धालु-जिज्ञासुजन मानगढ़ पर आया करते हैं, उनको विगत साठ वर्षों से भोजन-प्रसाद सेवा के द्वारा पोषित करने का अति प्रशस्तिपूर्ण कार्य गहवर वन की गोद में बसे जिस दिव्य स्थल के द्वारा होता है, उसका नाम है 'श्रीराधारसमंदिर' । शास्त्र के अनुसार –

'वैष्णवो यस्य गृहे भुङ्क्ते तत्र भुङ्क्ते हरिः स्वयम् ।'
हरिः यस्य गृहे भुङ्क्ते तस्य भुङ्क्ते जगत्त्रयम् ॥

जिस घर में अथवा जिस स्थान पर वैष्णव (भक्त) भोजन करते हैं, वहाँ साक्षात् भगवान् भोजन करते हैं और जहाँ भगवान् भोजन करते हैं, वहाँ तीनों लोक भोजन करते हैं । इस शास्त्र वचन का अक्षरशः पालन करते हुए, अभूतपूर्व, अतिनिःस्पृह भागवत वक्ता, राष्ट्रीय संत पंडित श्रीरामजीलालशास्त्रीजी की माताजी एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्तर की बेजोड़ भागवत व्यास साध्वी सुश्री मुरलिकाजी की दादी गोलोकवासिनी प्रातः स्मरणीया श्रीमतीयमुनादेवीजी ने अपने आवास श्रीराधारसमंदिर में आने वाले संत-वैष्णव जनों की सेवा की आधारशिला रखी । स्वनामधन्या माता

यमुनाजी की परमाद्भुत महिमा के सम्बन्ध में कुछ कहना सूर्य को दीपक दिखाने के समान अति न्यून है, वस्तुतः यह तो अवर्णनीय विषय ही है ।

पूज्यनीया माताजी प्राइमरी विद्यालय की अध्यापिका थीं, उनके पतिदेव गोलोकवासी प्रातः स्मरणीय श्रीबाबूलालजी भी प्राइमरी विद्यालय के अध्यापक थे । बरसाना के निकटवर्ती, ललितासखी की जन्मभूमि 'ऊँचागाँव' में यमुनाजी अध्यापन कार्य करतीं थीं । साधु-संतों, अतिथि, वैष्णव जनों के प्रति उनकी अपार निष्ठा थी । इसी निष्ठा के परिणाम स्वरूप वह अध्यापन कार्य के साथ ही साथ प्रतिदिन अपने हाथों से भोजन बनाकर साधु-संतों एवं अतिथि भक्तजनों की अत्यन्त प्रेम से सेवा किया करती थीं । उनका और उनके पतिदेव का वेतन अत्यधिक अल्प था, घर की आर्थिक स्थिति अति शोचनीय अवस्था में थी, ऐसी दुरूह परिस्थिति में भी उन्होंने अपने दैनिक भोजन-सेवाकार्य में कभी कोई विराम नहीं लगने दिया । निष्काम सेवा, त्याग और पूर्ण समर्पण की वह साकार प्रतिमा थीं । पूज्य श्रीबाबामहाराज के प्रति उनकी निष्ठा और समर्पण अद्वितीय थे । प्रयाग से बरसाना के मानिनी के मानगढ़ आगमन होने पर श्रीबाबामहाराज के चरणों में उन्होंने अपने और अपनी संतानों के जीवन को पूर्णरूपेण समर्पित कर दिया । गहवरवन में श्रीबाबामहाराज की माताजी की सेवा में उन्होंने अपनी दोनों पुत्रियों को तथा पुत्र पंडित श्रीरामजीलालशर्माजी को श्रीबाबामहाराजजी की देवदुर्लभ सेवा में अर्पित कर दिया । प्रायः रात को उनके घर चोर आया करते थे । उनके अन्य दो पुत्र किन्हीं कारणवश ब्रज के बाहर चले गए थे । पंडित रामजीलाल रात को भी बाबामहाराज के पास ब्रह्माचल पर्वत के शिखर मानगढ़ पर रहते थे लेकिन यमुनादेवी ने चोरों का खतरा होने पर भी कभी अपने इन सुपुत्र से रात को घर में रुकने को नहीं कहा । वह स्वयं ही रात्रि को पंडितजी को बाबामहाराज के पास मानमंदिर भेज देती थीं । उन्होंने कभी भी गृह-सुरक्षा की ओर ध्यान नहीं दिया, चोरों की भी परवाह नहीं की । अतिथि जनों और मानमंदिर के संतों द्वारा प्रतिदिन भोजन वहीं करने तथा आर्थिक विपन्नता के कारण उस जमाने में रस मंदिर पर ४३ हजार रुपये का ऋण हो गया था । उस समय किसी पारिवारिक सदस्य ने बाबा के नाम एक पत्र लिखा कि मान मंदिर के सभी संत प्रतिदिन हमारे घर ही भोजन करते हैं, इसके अतिरिक्त अतिथि जन भी प्रायः भोजन के लिए आते ही रहते हैं, हमारे घर पर ४३ हजार रुपये का ऋण है । ऐसी स्थिति में हम लोगों का जीवन तो बरबाद ही हो जाएगा । वह पत्र जब श्री बाबा महाराज को मिला तो उन्होंने यमुना माता जी को समझाते हुए कहा कि इस पत्र को लिखने वाला ठीक कह रहा है । तुम्हारे घर पर अपार ऋण है, आर्थिक दशा शोचनीय है, ऐसी स्थिति में तुम साधु-संतों एवं अतिथि जनों की भोजन सेवा बंद कर दो । परन्तु सेवा-मूर्ति यमुनाजी ने अपनी सेवा-निष्ठा पर अटल रहते हुए महाराज श्री से स्पष्ट कह दिया – 'मेरे जीवित रहते तो यह सेवा कभी बंद नहीं होगी, मृत्यु के पश्चात् क्या होगा यह तो प्रभु ही जाने ।' उनकी इस बेमिसाल सेवा-भावना का यह प्रभाव है कि उनके जीवित न रहने पर भी रस मंदिर में होने वाली प्रसाद-सेवा नित्य निरंतर वृद्धि को प्राप्त होती जा रही है । श्री बाबा महाराज के प्रति उनके दिव्य समर्पण और सेवा-निष्ठा को देखकर गाँव के कुछ लोग अकारण ही असहिष्णु हो उठे और एक बार तो रात्रि के समय ही ग्राम-पंचायत की ओर से उन्हें बुलाया गया और कहा गया कि तुम्हारा एक पुत्र तो मानगढ़ में बाबा के पास रहता है, तुम्हारी दोनों पुत्रियाँ बाबा की माता जी की सेवा में संलग्न हैं । तुम्हारा घर बरबाद हो चुका है, तुम्हारा तो वंश ही नष्ट हो गया । लोगों ने सोचा था कि यह स्त्री डर जाएगी लेकिन वह भयभीत नहीं हुई और उन अकेली स्त्री ने निर्भयतापूर्वक ग्रामपंचायत के सामने कह दिया – 'मैं मानमंदिर को एवं बाबामहाराज को जीवन में कभी नहीं छोड़ नहीं सकती । इसका परिणाम चाहे कुछ भी हो लेकिन मेरा निश्चय अटल है ।' जैसा कि भागवत में भगवान् श्रीकृष्ण ने कहा है – **'मद्भक्तपूजाभ्यधिका'** मेरी पूजा से अधिक बड़ी है मेरे भक्त की पूजा तथा रामचरितमानस में गोस्वामीजी ने लिखा है –

'मोरे मन प्रभु अस बिस्वासा ।
राम ते अधिक राम कर दासा ॥'

(श्रीरामचरितमानस, उत्तरकाण्ड -१२०)

इन्हीं शास्त्र-वाक्यों से प्रेरणा लेकर यमुनाजी ने भी संतों-भक्तों को भगवान् से अधिक मानकर उनकी सेवा की । एकबार 'श्रीबाबामहाराज' की सेवा में रहने वाले दो संत 'श्रीब्रजराजजी व श्रीमाधवीशरणजी' रसमंदिर पहुँचे । उस समय संत-सेवापरायणा यमुनाजी भोजन का थाल लेकर अपने गृह स्थित ठाकुर श्रीराधारासबिहारीलाल को भोग लगाने जा रही थीं । इन संतों को देखते ही ठाकुरजी के भोग का थाल यमुनाजी ने उन्हीं की सेवा में प्रस्तुत कर दिया । दोनों संत आश्चर्यचकित होकर बोले – 'माता जी ! ये क्या ? यह तो ठाकुरजी के भोग का थाल है ।' यमुनामाताजी ने उत्तर दिया – 'आप लोग संत हैं, साक्षात् ठाकुरजी हैं । पहले आप लोगों के प्रसाद पाने से ठाकुरजी का भोग लग जाएगा ।'

इसीलिये तो वाराहपुराण में भगवान् ने कहा है –

मत्सेवनाच्छत गुणं मद्भक्तस्य तु सेवनम् ।
मद्भोजनाच्छत गुणं मद्भक्तस्य तु भोजनम् ॥

मेरी सेवा करने से सौ गुना श्रेष्ठ है मेरे भक्त की सेवा करना, मुझको भोग लगाने से सौ गुना श्रेष्ठ है मेरे भक्तों को खिलाना-पिलाना ।

पतिदेव श्रीबाबूलालजी के दिवंगत होने से पूर्व यमुनाजी ने उनकी पेंशन का सब धन उन्हीं के हाथों बाबा महाराज को समर्पित करवा दिया था । इसी प्रकार उन्होंने अपनी भी मृत्यु के पूर्व अपनी पेंशन का सारा धन श्रीबाबा महाराज को समर्पित कर दिया था । इन दोनों दिव्य दम्पत्ति की पेंशन का सारा धन इस प्रकार मानबिहारीलाल की सेवा में पहुँच गया ।

यमुना देवी जिस समय ऊँचागाँव में अध्यापन कार्य करती थीं, उन दिनों वहां ब्रह्मचारी जी नामक एक महात्मा निवास करते थे । एकबार उन्होंने श्री बाबा महाराज से भागवत सप्ताह यज्ञ ऊंचागाँव में करने की प्रार्थना की । वह एक असंग्रही महात्मा थे, उनके पास न धन-बल था, न जन-बल था । उनके आग्रह पर जब श्री बाबा महाराज भागवत कथा कहने ऊँचागाँव गये तो उन्होंने एक टूटे से तखत को बिछाकर बाबा महाराज से उसी पर विराजित होकर कथा करने के लिए कहा । उनकी कुटिया पर भागवत कथा को श्रवण करने कोई श्रोता नहीं आया । एकमात्र श्रोता थीं केवल यमुना देवी । उन्होंने सात दिन तक अकेले ही श्री बाबा महाराज के श्री मुख से श्रीमद्भागवतकथा का श्रवण किया । उनकी इस कथा-निष्ठा को देखकर अन्त में पूरा गाँव कथा श्रवण हेतु आया ।

अपने अंतिम समय में वह गंभीर रूप से बीमार थीं । एकबार पूज्य श्री बाबा उन्हें देखने गए तो यमुना जी ने अपनी सेवा में लगी हुई पुत्रियों के बारे में कहा – 'महाराज ! इन दोनों को यहाँ से ले जाओ, इन्हें श्री जी की सेवा में समर्पित कर दो ।' बाबा महाराज बोले – 'अभी तुम बीमार हो, अभी तुम्हें इनकी सेवा की आवश्यकता है । इन्हें यहीं रहने दो ।' परन्तु त्यागमूर्ति यमुना जी अत्यंत गंभीर रुग्णावस्था में भी अपनी पुत्रियों को अपनी सेवा से हटाकर भक्त-भगवंत की सेवा में नियुक्त करना चाहती थीं ।

श्रीबाबामहाराज को ही सर्वस्व मानकर सम्पूर्ण जीवन उनके चरणों में न्यौछावर करने वाली इन महाभागा ब्रजदेवी का नित्य धाम-गमन भी अत्यंत चमत्कारिक हुआ, उनके अंतिम समय (पौष कृष्ण द्वितीया, १-१- २००२) जब श्रीबाबामहाराज रसमंदिर पहुँचे तो उनकी प्रेरणा से उस समय वहाँ नाम-कीर्तन किया जा रहा था । माता यमुनाजी के शरीर को शय्या से उतारकर उनकी पुत्रवधू श्रद्धामयी मिथिलेशजी ने उनके सिर को पूज्य गुरुदेव श्रीबाबामहाराज की गोद में रख दिया । करुणासिंधु की वात्सल्यमयी गोद का दिव्य संस्पर्श पाते ही इन महामहिमामयी देवी के प्राण पखेरू आनन्दपूर्वक श्रीजी के नित्य लीला धाम की ओर गमन कर गए । उन्होंने श्रीराधारसमंदिर से जिस 'संत-भक्त सेवा' की नींव रखी, विषम परिस्थितियों में भी उसे कायम रखा, आज उनके न होने पर भी प्रतिदिन हजारों की संख्या में भक्तजन उस दिव्य स्थान पर प्रसाद ग्रहण कर कृतकृत्य हो रहे हैं ।

यदि गुरुदेव निःसंग हैं तो शिष्य बिना किसी उपदेश के ही निःसंग बन जायेगा

सच्ची श्रीकृष्ण-प्रेमिका 'कान्हूपात्रा'

श्रीबाबामहाराज के एकादशी-सत्संग (१०/०५/२००६) से संगृहीत

१०० वर्ष पूर्व महाराष्ट्र प्रान्त में कान्हूपात्रा नामक एक प्रसिद्ध प्रेमी भक्ता हुई हैं । वह एक वेश्या की पुत्री थी, आश्चर्य तो यह है कि एक वेश्या की पुत्री होने पर भी उसको भगवान् श्रीकृष्ण की प्राप्ति हुई, यह चमत्कार सभी के द्वारा देखा गया, आज भी महाराष्ट्र के प्रसिद्ध तीर्थ पंडरपुर में पंडरीनाथ भगवान् के पास में उसकी मूर्ति विराजित है । जो भक्तजन पंडरपुर में विट्ठल भगवान् का दर्शन करने जाते हैं, वे भगवान् के पास में विराजित कृष्णप्रेमिका कान्हूपात्रा के भी दर्शन करते हैं । जैसे - ब्रज में वृन्दावन के बिहारीजी सुप्रसिद्ध ठाकुर हैं, वैसे ही महाराष्ट्र में पंडरपुर के पंडरीनाथ विट्ठल भगवान् भी सुविख्यात ठाकुर हैं । एकादशी के दिन तीस-तीस कोस दूर से भक्तलोग पैदल चलकर पंडरपुर में विट्ठल भगवान् के दर्शन के लिए जाते हैं, उन्हें वारकरी भक्त कहते हैं, वे कीर्तन करते हुए पैदल जाते हैं और कई दिनों में वापस लौटते हैं, वहाँ ऐसी उनकी अलौकिक महिमा है । पंडरपुर में विट्ठल भगवान् के मन्दिर के पास कान्हूपात्रा की मूर्ति आज भी स्थापित है । यह बिल्कुल सच्ची घटना है । महाराष्ट्र में मंगलबेड़ा नामक एक गाँव था, वहाँ कान्हूपात्रा की माँ श्यामा नामक एक वेश्या थी । वेश्या का काम ही है – नाचना-गाना और कामी पुरुषों को रिझाना तथा शरीर को विषयभोग के लिए बेचकर पैसा कमाना । सभी लोग जानते हैं कि वेश्या का कर्म अच्छा नहीं होता है । ऐसी पतिता माँ के गर्भ से पैदा होने के बाद भी जैसे कोयले की खान से हीरा निकलता है वैसे ही एक वेश्या की बेटी ने अपने सच्चे प्रेम और त्याग से कृष्ण को पा लिया । कान्हूपात्रा की माँ श्यामा बड़ी सुंदर थी और लोगों को रिझाने व धन कमाने के लिए नाचती-गाती थी, उस समय वहाँ का मुसलमान बादशाह बेदरशाह बड़ा भोगी था । उसने जब श्यामा का नृत्य-गान देखा तो लोगों ने उससे कहा कि इसकी एक पुत्री है, वह भी युवा और इतनी सुंदर है कि उसके जैसी सुंदर लड़की आपने देखी नहीं होगी । बादशाह ने ऐसा सुनकर श्यामा को हुक्म जारी कर दिया कि अपनी लड़की को हमारे महल में हाज़िर करो ।

"मंगलबेड़ा वेश्या श्यामा, कान्हूपात्रा से बोली माँ ।"

श्यामा ने बादशाह का आदेश सुनकर कान्हूपात्रा से कहा – "बेटी ! अब तू जवान हो गई है, महफ़िल में नाच, तेरे ऊपर सोना-चाँदी बरसेगा, हम वेश्याएँ अपनी जवानी से सारे जीवनभर के लिए पैसा कमा लेती हैं और बुढ़ापे में आराम से खाती-पीती हैं, सुख-सुविधा के साथ जीवन व्यतीत करती हैं । **"आ जा महफ़िल जगमग कर दे, आ जा महफ़िल में रस भर दे ।"** कान्हूपात्रा ने अपनी माँ की आज्ञा नहीं मानी, उसने कहा – "माँ ! मैं इनके आगे क्या नाचूँ, महफ़िल में जितने लोग आते हैं, वे गंदे कामी होते हैं ।" वह बालिका बचपन में देखती थी, उसके घर के सामने से प्रत्येक एकादशी को वारकरी भक्त नाचते-गाते, कीर्तन करते हुए पंडरपुर जाया करते थे, उनके प्रेमावेश से भरे नृत्य-गान को देखकर कान्हूपात्रा भी भगवत्प्रेम की मस्ती में झूमने लगती थी । वह सोचती थी कि देखो - ये भक्त कितने पवित्र हैं, ये प्रेम से भगवान् को पुकारते हैं, भगवान् के लिए प्रेम से नाचते-गाते हैं और दूसरी ओर हमारे कोठे पर जो लोग आते हैं, वे शराब के नशे में मस्त होते हैं, उनकी नजरें कितनी गंदी होती हैं, वे गंदे भाव से केवल भोग के लिए आते हैं । इसीलिए ऐसे कामी लम्पट पुरुषों की महफिल छोड़कर कान्हूपात्रा कोठे के बाहर मार्ग में भगवान् के प्रेमी भक्तों का दर्शन करने चली जाती थी । वह वारकरी भक्तों का भजन-कीर्तन सुनती, उनका नृत्य देखती और स्वयं भी प्रेम में भरकर उन भक्तों के साथ नाचा करती थी । जो ऐसा पवित्र नृत्य कर चुकी है प्रभु को रिझाने के लिए, क्या अब वह इन मुर्दे भोगियों को रिझाएगी ? अतः माँ के कहने पर भी वह उन कामियों की महफिल में नहीं गयी और वहाँ पहुँच गयी जहाँ एकादशी के दिन भगवान् के प्रेमी वारकरी भक्त कीर्तन करते, नाचते-गाते हुए पंडरपुर जा रहे थे ।

"वारकरी भक्तों का गायन, भक्ति भरा कीर्तन और नर्तन।"

उसने देखा कि झुण्ड के झुण्ड भक्तजन भगवान् को रिझाने के लिए नृत्य-गान कर रहे हैं । **"देख देख मन बदल गया"** उनके प्रेम भरे पवित्र कीर्तन और नृत्य को देखकर कान्हूपात्रा समझ गयी कि विषयों के भोग गंदे हैं । **"विषयों**

का विष उतर गया" हम लोग जो भोग भोगते हैं, ये ज़हर है । कान्हूपात्रा का ज़हर उतर गया, वह समझ गयी कि यह मनुष्य शरीर भगवान् की प्राप्ति के लिए है, विषय-भोगों के लिए नहीं है । इसलिए उसने अपनी माँ से स्पष्ट कह दिया – **"बोली माँ मैं न नाचूँगी, इस तन को मैं न बेचूँगी ।"**

ये कामी लोग भोग के लिए पैसा देते हैं, इस शरीर को मैं इन्हें नहीं बेचूँगी । माँ ने पूछा कि फिर तू क्या करेगी ? कान्हूपात्रा ने कहा – "यह शरीर एक मंदिर है, इसमें भगवान् रहते हैं अतः इस शरीर को मैं भगवान् को दूँगी ।"

"यह तन हरि का मंदिर है, श्री प्रभु जी को अर्पण है ।"

यह शरीर मैं भगवान् को दूँगी, इससे भोग नहीं भोगूँगी । माँ बोली – "अरे, ऐसा करने से तू जीवन भर भूखी रहेगी । अभी जवानी है, इस समय तू जितना चाहे कमा सकती है, हम वेश्याएँ जवानी में अपार धन कमाकर आजीवन बैठकर खाती हैं, बुढ़ापे में बड़े सुख से जीवन बिताती हैं । आज यह जवानी है, थोड़ी देर में चली जायेगी । भगवान् का भजन तो बुढ़ापे में भी हो जाता है, बुढ़ापे में भजन करना, माला लेके सटकाना, अभी जवानी है इसलिए पैसा कमा ।

नहीं नाचेगी क्या खाएगी, क्या पहरेगी कहाँ रहेगी ।
चढ़ी जवानी ये सुंदर है, धन अर्जन की यही उमर है ॥

यही उम्र पैसा पैदा करने की है ।" कान्हूपात्रा बोली – "अरे माँ ! तू कहती है कि मैं क्या खाऊँगी ? ऐसा कहती है तो सुन –

जिसने भोजन दिया पेट में,
बाहर दूध दिया माँ स्तन में ।

जब बच्चा माँ के गर्भ में रहता है तब उसे भोजन कौन देता है ? भगवान् ही गर्भ में बच्चे को भोजन प्रदान करते हैं और जब बच्चा पैदा होता है तो भगवान् माँ के स्तन में दूध भर देते हैं । **'वही कृष्ण मेरा तो प्रिय है, वही वही तो मेरा प्रिय है । मेरा प्यारा वही कृष्ण है ।"**

माँ से ऐसा कहकर कान्हूपात्रा महफिल में नाचने नहीं गयी । ऐसा होने पर सभी धनी लोग लौट गए और बादशाह से बोले कि वह लड़की तो हज़ारों-लाखों में एक है, बहुत सुंदर है लेकिन नाचती नहीं है । बादशाह मुसलमान था, उसने पूछा – "क्यों ?" लोग बोले – "वह कहती है कि मेरा प्यारा तो कृष्ण है ।" बादशाह बोला – "कौन है कृष्ण ? ये कृष्ण कहाँ से आ गया ?" उसने अपने सैनिकों को आदेश दिया – "जाओ और उस लड़की को पकड़कर मेरे पास लाओ ।" सैकड़ों सैनिक कान्हूपात्रा को पकड़ने के लिए गये, उन्हें देखकर वह किवाड़ बंदकर के कोठे में ऊपर घुस गयी । माँ बुलाने लगी – **"बेटी, जल्दी निकल आ, नहीं तो मेरे हाथ-पाँव भी तू कटवायेगी ।" "बेदरशाह ने सुन्दरता सुन, बुलवाया भोगों की ले धुन । गए सिपाही वहाँ लेने को, मना कर दिया वहाँ जाने को ॥"**

माँ रोने लग गयी और बोली – "बेटी, यह बादशाह बड़ा बदमाश है, जल्दी बाहर आ जा नहीं तो वह मेरे हाथ-पाँव कटवाएगा ।"

'माँ ने कहा शाह का डर है, मारेगा वह बड़ा क्रूर है ।"

कान्हूपात्रा समझ गयी कि माँ नहीं मानेगी, दरवाजा खुलवा देगी और सिपाही लोग भीतर घुसकर मुझे रस्सी से बाँधकर ले जायेंगे । वह बोली – "तुम चलो माँ, मैं स्नान करके तैयार होकर आती हूँ ।" माँ ने सिपाहियों से कह दिया कि मेरी बेटी बात मान गयी है । आप लोग बैठो, वह स्नान करके, श्रृंगार करके आ रही है । सिपाही लोग खुश हो गए, बैठ गए और इधर कान्हूपात्रा पीछे का दरवाजा खोलकर चुपके से जंगल में होते हुए भाग गयी । **"सुनकर चुप चुप भाग गयी वह, पंडरपुर की राह लई वह ।"** वह भागती जा रही थी और रोते-रोते गोपाल को बुला रही थी, तभी रास्ते में उसे वारकरी भक्तों की टोली मिल गयी, वे भक्त कीर्तन करते हुए जा रहे थे, वह भी उनके साथ कीर्तन करते हुए पण्डरपुर पहुँच गयी ।

अब उधर सिपाहियों ने कान्हूपात्रा की माँ से पूछा – "बहुत देर हो गई, कहाँ है तेरी लड़की ?" दरवाज़ा खोला तो देखा कि वह अंदर नहीं थी । सिपाही बोले – "कहाँ गयी ?" माँ बोली – "मुझे पता नहीं है ।" सब सिपाही दौड़े और दौड़ते-दौड़ते पण्डरपुर पहुँच गये क्योंकि बादशाह का हुक्म था कि वह लड़की आनी चाहिए वरना सबका सिर काट दिया जाएगा । सिपाही पंडरपुर पहुँचे, वहाँ कान्हूपात्रा प्रभु के आगे रोते हुए कीर्तन कर रही थी और नाच रही थी ।

"सेना ने जा ढूँढ लिया" सैनिकों ने उसे ढूँढ लिया, वह बड़ी सुन्दर थी, उसके प्रेम को देखकर सैनिक बोले – "यही है वह लड़की ।" और फिर उन्होंने उसे रस्सी से बाँध दिया । **"रस्सी से जा बाँध दिया"** कान्हूपात्रा रोने लगी और

सिपाहियों से बोली कि मुझे एकबार और प्रभु का दर्शन कर लेने दो, फिर इस शरीर को जहाँ चाहे ले जाना, काट देना चाहे फेंक देना, एक बार और मैं प्रभु के आगे सिर झुका लूँ । सिपाहियों ने कहा कि हाँ, ठीक है, अब यह कहाँ जाएगी, इसी प्रकार बँधे-बँधे ही दर्शन कर ले । कान्हूपात्रा ने कहा – "ठीक है, मेरे हाथ-पाँव बँधे रहने दो किन्तु एक बार मुझे प्रभु का दर्शन कर लेने दो ।" **"बोली दर्शन कर लेने दो, आज्ञा मानूँगी जाने दो ।"**

सिपाही बोले – "ठीक है, इसे एक बार अपना माथा भगवान् के लिए टेकने दो ।" कान्हूपात्रा गयी और भगवान् पण्डरीनाथजी के चरणों में जाकर गिर पड़ी, मस्तक उनके चरणों में झुका दिया और बोली – "हे गोपाल ! ये सिर मैंने तुम्हारे चरणों में दे दिया, अब मुझे चाहे मार, चाहे वेश्या बनाकर विषय भोगों में डाल, मैंने तो अपना सब कुछ अब तुझे सौंप दिया ।"

"जाकर गिरी कृष्ण चरणों में, सिर दे पांडुरंग चरण में ।"

वह भगवान् के चरणों में जाकर लेटी रही, जब बहुत देर तक नहीं उठी तो सिपाही बोले – "चल उठ !" जब वह नहीं उठी तो सिपाही उसे खींचने लगे परन्तु वह तो अब सदा के लिए इस संसार से जा चुकी थी । तब सभी सिपाही चले गये वहाँ से । **"फिर न उठी सो गई सदा को, छोड़ गई इस झूठे जग को । लौट गये सब शाह सिपाही, अस्थि दक्षिण द्वार में गाड़ी ।"** उसकी अस्थियाँ मंदिर के दक्षिण द्वार पर गाड़ी गई । उसकी मूर्ति आज भी पंडरपुर के मंदिर में स्थापित है ।

कान्हूपात्रा मूर्ति रूप में, अब भी है मंदिर समीप में ।
इसी जनम में मिली कृष्ण से, वेश्या की पुत्री हो तन से ।
अद्भुत है ये प्रेम कहानी, जय मोहन जय राधारानी ॥

इस प्रकार परमधन्य हुई वह कृष्णप्रेमिका कान्हूपात्रा, जिसने अपना तन-मन-प्राण श्रीठाकुरजी को समर्पित कर जीवन का परम लाभ प्राप्त किया ।

महाराष्ट्र की मीरा 'श्रीसक्खूबाई'

श्रीबाबामहाराज के एकादशी-सत्संग से संग्रहीत

प्रभु आते हैं, जब कोई हृदय से, करुणा से उन्हें बुलाता है । सच्ची पुकार को सुनते हैं भगवान् । भारत में बहुत-सी भक्त देवियाँ हुई हैं, जैसे - मीराबाई, करमैतीबाई, रत्नावती आदि । ये सब ऐसी भक्त देवियाँ हुई हैं जिनकी पुकार पर प्रभु आये, ऐसी ही एक भक्त देवी सक्खूबाई हुई हैं, ये महाराष्ट्र में कृष्णा नदी के किनारे कहुवाड़ गाँव में रहती थीं, ये भक्त तो थीं ही लेकिन भक्त भी कभी-कभी ऐसे बवंडर में फँस जाता है, जैसे - विभीषण को लंका में भजन करना पड़ा, जहाँ राम नाम लेना बड़ा कठिन था । जैसे - प्रह्लाद जी ने हिरण्यकशिपु के समय में भक्ति किया तो बहुत कठिनाई आई - आग में जलाये गए, पानी में डुबाये गए, पहाड़ों से कुचला गया, अस्त्र-शस्त्र बरसाए गए । ऐसी स्थिति में भजन करना बड़ा कठिन हो जाता है लेकिन सच्चे भक्त रुकते नहीं हैं, उसी का नाम भक्ति है, जैसे - आंधी आती है तो छोटे-मोटे पेड़ उखड़ जाते हैं लेकिन पहाड़ नहीं उखड़ता । ऐसे ही सच्चे भक्तों के सामने कोई भी मुसीबत रुक नहीं सकती, कोई बाधा उनको रोक नहीं सकती, आंधी में भी उनकी भक्ति का दीपक जलता रहता है ।

सक्खू बाई का ब्याह हुआ एक नास्तिक पति से जो भगवान् का नाम लेना जानता ही नहीं था और वैसे ही इनके सास-ससुर थे । घर में चार सदस्य थे, एक सक्खूबाई बहू के रूप में, एक उनके पति, एक सास और ससुर । इनके पति, सास और ससुर तीनों ही आसुरी स्वभाव के थे, दया तो उनमें थी ही नहीं जबकि सक्खूबाई भक्त थीं, ये काम करते हुए भी कीर्तन करती रहती थीं । गृहस्थ के कामों में पुराने जमाने में आटा पीसने के लिए चक्की स्वयं चलानी पड़ती थी । सक्खूबाई भी चक्की से आटा पीसती, गोबर से घर लीपती लेकिन साथ ही घर के सब काम करते समय कीर्तन करती रहती थीं । इस कारण उनके सास और ससुर उनसे बहुत चिढ़ते थे और पति देवता का तो कहना ही क्या । सास इनके पति के कान भरती थी कि कहाँ से इस वेश्या को ब्याह के लाया, दिन भर गुनगुन करती रहती है । सक्खू दिनभर भगवान् का नाम लेती, कृष्ण-कीर्तन करती रहती

तो इनके ससुराल वाले इनसे चिढ़ते थे और पति तो अक्सर इन्हें गुस्से में पीटता था, डंडे लगाता था कि क्यों दिनभर गाती रहती है ।

कथा-कीर्तन व भक्त में प्रेम न होने का कारण है –

तुलसी पिछले पाप सों हरि चर्चा न सुहाय ।
जैसे ज्वर के अंश ते भोजन की रुचि जाय ॥

मनुष्य के पाप उसको भजन से रोकते हैं । बुखार बहुत तेज हो और खीर रख दो जीभ पर तो वह कड़वी ही लगेगी, ऐसे ही हमारे पाप हैं जो भगवान् के नाम से दूर करते हैं । लोग अपना जीवन नष्ट करते हैं, ताश खेलते हैं, हुक्का पीके गप्प मारते हैं । इस प्रकार इस दुर्लभ मनुष्य जीवन को ऐसे ही बेकार नष्ट कर देते हैं, भगवान् का कीर्तन नहीं कर सकते ।

कीर्तन करने के कारण सक्खूबाई का पति तो इन्हें पीटता ही था, इसके अलावा सास भी पीटती थी और कभी-कभी ससुर जी भी हाथ लगा देते थे लेकिन ये अपना कीर्तन नहीं छोड़ती थीं, भगवान् का नाम लेती रहती थीं और जिसकी भक्ति में लगन है उसको दुनिया में कोई रोक नहीं सकता चाहे वह हिरण्यकशिपु हो, चाहे रावण सामने आ जाए लेकिन भक्ति करने वाले को कोई रोक नहीं सकता ।

एक बार कृष्णा नदी के तट पर सक्खूबाई पानी भरने गयीं थीं । उसी समय वहां से वारकरी भक्त कीर्तन करते हुए पंडरपुर जा रहे थे । महाराष्ट्र में एकादशी के दिन दूर-दूर से लोग पंडरीनाथ भगवान् के दर्शन करने आते हैं, दस-दस कोस दूर से, बीस-बीस कोस दूर से पैदल चलते हुए कई दिन में पंडरपुर पहुँचते हैं, उनका नाम वारकरी भक्त होता है । ऐसे ही जब सक्खू बाई नदी से पानी भरने गयीं थीं तो एकादशी के दिन वहां से वारकरी भक्त नाचते-गाते, भगवान् के नाम का कीर्तन करते हुए पंडरीनाथ भगवान् के दर्शन करने जा रहे थे । उन्हें देखकर ये अपने आप को रोक नहीं पायीं और सोचने लग गयीं कि घर में तो रोज मेरी पिटाई होती है ही, एकदिन अच्छी तरह पीट लेंगे, चलो आज मैं भी इन भक्तों के साथ भगवान् पण्डरीनाथ के दर्शन कर आऊं । ऐसा सोचकर सक्खू ने पानी के घड़े को वहीं नदी के तट पर रख दिया और जो भक्त लोग कीर्तन करते हुए, नाचते-नाचते पंडरपुर जा रहे थे,वह भी उन्ही की टोल में सम्मिलित हो गयी और कीर्तन करते हुए भगवान् से प्रार्थना करने लगी-हे प्रभु!मैं बहुत दिन से सोच रही थी कि तुम्हारा दर्शन करुँगी, आज मैं तेरे नाम पर निकल पड़ीं हूँ, तू दया करना । जैसे ही सक्खू थोड़ी दूर ही गयी, इतने में गाँव का कोई आदमी सामने से आ रहा था,उसने सक्खू को पहचान लिया और सोचने लगा कि ये तो हमारे गाँव की बहू है, सक्खू इसका नाम है लेकिन यह तो कीर्तन करने वालों के साथ जा रही है, चलो दौड़ के इसके घर वालों को खबर कर दूँ कि तुम्हारी बहू भाग गयी । सक्खू का भागने का भाव नहीं था, उसका तो दर्शन करने का भाव था लेकिन लोगों की आदत होती है जरा-सी बात को नमक मिर्च लगा (बढ़ा-चढ़ाकर कह) देते हैं, इसलिए वह आदमी सक्खू के घर गया और उसके पति तथा सास-ससुर से कहा – अरे, तुम्हारी बहू तो भाग गयी । उन लोगों ने पूछा - कहाँ भाग गयी, तो वह आदमी बोला कि कीर्तन करने वालों के साथ, अभी यहाँ से थोड़ी दूर वह उनके बीच जा रही थी, उसको शरम नहीं आई, सब नाच रहे थे, वह भी उनके साथ नाच रही थी । इतना सुनते ही पति और ससुर डंडा लेकर चल पड़े और थोड़ी दूर जाकर सक्खू को पकड़ लिया । कीर्तन वालों को क्या पता कि यह कौन है, किसकी बहू है, कोई क्यों किसी की बहू के लिए बोलेगा लेकिन कुछ कीर्तन वाले सक्खू के पति और ससुर से बोले - क्या करते हो, तो इन लोगों ने कहा – "यह हमारी बहू है, तुम लोग इसे भगा के ले जा रहे थे ।" इतना सुनते ही सब कीर्तन करने वाले भक्त घबड़ा गए कि ये तो हमारे ऊपर ही कलंक लगा रहे हैं अतः उन्होंने आगे कुछ नहीं कहा । अब तो सक्खू के पति और ससुर उसे खींच के घर लाये और बुरी तरह उसकी ऐसी पिटाई किया कि उसको हर तरह से पस्त कर दिया और एक कोठरी में बंद कर दिया । सास बोली - अब इसको इसी में पड़ा रहने दो, दो-चार दिन न खाने को मिलेगा न पीने को तो इसको अक्ल आ जायेगी और फिर कभी ऐसी बदमाशी नहीं करेगी । तीनों ने यही विचार किया कि इसको यहीं कोठरी में पड़ी रहने दो, दो-चार दिन तक न पानी दो, न भोजन दो । उन तीनों ने सक्खू को कोठरी में बंद करके दरवाजा बंद कर दिया । अँधेरी कोठरी में वह भूखी प्यासी पड़ी रही और धीरे-धीरे भगवान् का कीर्तन करने लगी,

भगवान् का नाम उसने नहीं छोड़ा, वह श्रीराधारानी और कृष्ण का नाम ले रही थी । रात को सास-ससुर और पति तो आराम से सो रहे हैं मौज में यह सोचकर कि अच्छा दंड दिया, बड़ी भक्त बनी थी, खूब पिटाई हुई, अब भूखी प्यासी रहेगी तो समझ में आएगा कि **राधे-राधे** कहने से क्या होगा । पड़ोस में उसकी सहेली रहती थी । अच्छे आदमी को कोई न कोई अच्छा साथी मिल भी जाता है । वह सहेली सक्खू से बड़ा प्यार करती थी, जानती थी कि ये बेचारी बड़ी अच्छी है, भक्ति ही तो करती है लेकिन ये निशाचर लोग इसको बड़ा पीटते हैं । अब करे क्या बेचारी, वह भी पड़ोस की बहू थी, अब बहू-बहू को क्या मदद देगी लेकिन भगवान् श्यामसुन्दर ने इस सहेली का रूप बनाया और बना करके सक्खू की कोठरी के पास आये, उनके आते ही ताला अपने आप खुल गया क्योंकि भगवान् तो भगवान् हैं, जब कंस की जेल में वह थे तो सभी ताले खुल गए फिर ये तो छोटे-मोटे ताले थे । अँधेरे में भगवान् सक्खू की कोठरी में घुसे और उसको गोद में ले लिया । देखो, भगवान् कितना प्यार करता है यदि उसकी शरण सच्ची हो, प्यार सच्चा हो । हम जैसे लोग नकली हैं तो नकली प्रेम नहीं असली प्रेम चाहिए । भगवान् सक्खू की सहेली के रूप में गए थे । अपनी सहेली को बंद कोठरी के भीतर देखकर सक्खू ने पूछा – अरे ! तू यहाँ कैसे आ गयी ? सहेली बोली - मैं तो इसलिए आ गयी क्योंकि मुझे पता था कि तुझे बहुत पीटा गया है । सक्खू बोली कि बाहर से तो ताला बंद था । सहेली बोली - ताला तो मैंने खोल लिया । सक्खू ने पूछा - तू यहाँ क्यों आई ? सहेली ने कहा – ले, तू पहले पानी पी, ये भोजन कर, तेरे लिए लायी हूँ, चुपचाप खा ले । अब सहेली का रूप तो भगवान् ने बना लिया है, सक्खू को क्या पता कि ये प्रभु हैं, ठाकुरजी उसको खिला रहे हैं, उस भोजन को करते ही उसकी सारी शक्ति वापस आ गयी, सब दर्द गायब हो गया । ठाकुरजी ने सक्खू को पानी पिलाया । सक्खू रोने लग गयी और भगवान् रूपी सहेली से बोली कि तू जल्दी चली जा नहीं तो मेरे सास, ससुर और पति तुझको भी पीटेंगे । मेरे सास, ससुर और पति बड़े क्रूर हैं । वह सहेली बोली - देख, मैं अब यहाँ से लौट के नहीं जाऊँगी, मैं यहाँ तेरी जगह बँध जाती हूँ, तू मुझे बाँध दे और पंडरपुर चली जा । सक्खू ने कहा – अरे, ऐसा कैसे हो सकता है, सब सो रहे हैं । सहेली बोली - तू जा पंडरपुर, वहाँ भगवान् के दर्शन कर, मुझको भगवान् ने सपना दिया है, इसलिए मैं तेरी सहायता के लिए आई हूँ । जब उसने ऐसा कहा तो सक्खू बोली – अब मेरे ससुराल वाले तुझे पीटेंगे । सहेली बोली - अभी तो दो-चार दिन वे लोग किवाड़ नहीं खोलेंगे, जब तक तू आ जायेगी । सहेली ने यह भी कहा कि मुझे ऐसा करने के लिए भगवान् ने स्वप्न में आज्ञा दिया है । अब तो सक्खू को विश्वास हो गया । उसने सहेली रूपी भगवान् के हाथ-पाँव रस्सी से बाँध दिए ताकि ससुराल वाले देखेंगे कि कोठरी में, अँधेरे में सक्खू पड़ी है तो वे उसका पीछा नहीं करेंगे । सहेली को बाँध करके सक्खू रात को घर से निकली और भागना शुरू किया, रात भर वह भागती रही और दूसरे दिन वहाँ पहुँच गयी जहाँ भक्त लोग कीर्तन कर रहे थे । उन भक्तों ने देखा - अरे, ये तो वही बहू है जिसको इसके पति और ससुर पकड़ के ले गए थे । कीर्तन वाले भक्त दयालु तो होते ही हैं, उन्होंने सक्खू से पूछा - तुम यहाँ कैसे आ गयी बहन ? उसने कहा कि मैं इस तरह आ गयी हूँ कि मुझको मेरी सहेली ने भेजा क्योंकि उसको प्रभु ने स्वप्न दिया था, मेरी जगह कोठरी में वह बँध गई है । उन भक्तों ने सक्खू से बहुत प्रेम किया और इनके साथ वह कीर्तन में प्रेम से नाचती-कूदती । वे कीर्तनियाँ भक्त उसे प्रेम से भोजन कराते, पानी पिलाते । भक्त तो भक्त से प्रेम करता ही है, इस प्रकार वे भक्त प्रेम से कीर्तन करते हुए पंडरपुर पहुँच गए । सक्खू ने वहाँ पण्डरीनाथ भगवान् के दर्शन किये, बड़ा आनंद आया । वह सोचने लग गयी कि मैं प्रतिदिन विचार करती थी कि आज पंडरपुर चलूँ लेकिन ऐसा लगता था कि अब जिन्दगी में कभी यहाँ आ नहीं पाऊँगी । उसको वहाँ बड़ा आनंद आया । उधर उसकी ससुराल में क्या हुआ कि दो-तीन दिन बीत गए तो सास बोली कि कहीं ऐसा न हो कि सक्खू मर जाए, कहीं मर जाएगी तो बड़ी बदनामी होगी क्योंकि हमलोगों ने उसे पीटा है, ये पड़ोसिन देख रही थी । इसलिए उसने अपने बेटे से कहा कि तू जा और उसके हाथ-पाँव खोल दे नहीं तो वह मर जाएगी । ससुर भी बोला - बात तो सही है, यदि वह मर गई तो हमारी बड़ी बदनामी होगी और गाँव वाले

क्या कहेंगे ? उसने भी कहा - बेटा, जल्दी जाकर के सक्खू को खोल दे, दो-तीन दिन हो गए हैं, न उसने पानी पिया है, न रोटी खायी है । पति देवता कोठरी में घुसे रस्सी खोलने के लिए, उधर ठाकुर जी ने सक्खूबाई का रूप बना लिया, पहले तो सहेली बनके आए थे, अब उन्होंने सक्खूबाई का रूप बना लिया, वही मुँह, वही आँख-कान और जब पति ने रस्सी खोला तो उन्हें छूते ही उसकी बुद्धि शुद्ध हो गई । भगवान् की कृपा से चमत्कार हो गया । पति सोच रहा है कि हमने इस बेचारी को बहुत पीटा, ये बड़ा गलत काम हुआ, कई दिन से हमने इसको रोटी नहीं दिया, पानी नहीं दिया, ये तो बहुत गलत बात है । अब उसकी बुद्धि शुद्ध हो गयी, इसलिए ऐसा सोचने लगा । जब आदमी की बुद्धि शुद्ध हो जाती है तब उसको अपनी गलती का पता पड़ता है । पति सक्खू को कोठरी के बाहर लाया और उसने अपने माँ-बाप से कहा कि ये मरी नहीं, जीवित है । प्रभु ने अपनी लीला दिखायी, वे ही सक्खू बने हैं । सक्खू सास से लिपट कर रोने लग गयी तो सास की भी बुद्धि शुद्ध हो गयी, वह बोली - बेटी, तुझे बहुत कष्ट हुआ, अब खा-पी ले, फिर बहू ने ससुर के पाँव छुए तो ससुर की बुद्धि भी शुद्ध हो गयी, वह बोला - बेटी, ये बड़ा गड़बड़ हुआ, हम लोगों ने तुझे व्यर्थ ही मारा-पीटा, तू हमें माफ कर दे । सास भी कहने लगी - बेटी, तू हमें माफ़ कर दे, तू तो बड़ी अच्छी है, कोई दुःख नहीं करना मन में । सक्खू बोली - नहीं-नहीं माताजी, मुझे कोई दुःख नहीं है, आप लोग तो मेरे माता-पिता हैं, यदि मुझको मारेंगे तो मेरी भलाई के लिए ही मारेंगे । भगवान् ने ऐसी कृपा कर दी कि सास-ससुर कहने लगे – अरे ! कैसी अच्छी बहू है, देखो तो ये कह रही है कि आप मारेंगे तो भलाई के लिए मारेंगे, कैसी हीरा जैसी बहू है, अब तो सास-ससुर और पति सक्खू से बड़ा प्यार करने लगे । नकली सक्खूबाई ने भोजन बनाया और सास-ससुर व पति ने पाया । देखो, भगवान् की लीला, वह रसोई घर में बैठकर भोजन बना रहे हैं और ये सब खा रहे हैं । भक्त के लिए भगवान् क्या-क्या नहीं करते हैं । अब जब भगवान् के द्वारा बनाया हुआ भोजन किया सास-ससुर और पति ने तो उनकी बुद्धि और अधिक शुद्ध हो गयी । वे कहने लगे – अरे सक्खू, तू तो बड़ी अच्छी है, कीर्तन करती है, अब हम भी तेरे साथ कीर्तन किया करेंगे । अब तो तीनों कीर्तन कर रहे हैं और सक्खूबाई कीर्तन करा रही है । वह घर ही अब बदल गया और उधर पंडरपुर में असली सक्खूबाई रोज वहाँ से चलने की सोचती थी । पंद्रह दिन हो गए उसको और यहाँ तक कि भगवान् ने एक और लीला किया कि वह दर्शन करते-करते जब वहाँ से चलने लग गयी तो सोलहवें दिन उसने सोचा कि अब मैं जा रही हूँ फिर जीवन में कहाँ आऊँगी तो वहीं भगवान् के विरह में उसने शरीर छोड़ दिया । वहीं जब उसकी मृत्यु हो गई तो कहवाड़ गाँव का अचानक एक पंडित भी पंडरपुर पहुँच गया । लोगों ने कहा - अरे, यह कौन स्त्री मर गयी है, तो वह ब्राह्मण बोला कि ये तो हमारे गाँव की बहू है । लोगों ने पूछा - तुम इसे जानते हो । ब्राह्मण ने कहा - हाँ, मैं जानता हूँ । मैं इसके गाँव का पंडित हूँ, ये हमारे गाँव की बहू है, ये घर से भाग करके यहाँ दर्शन करने आई थी । पुराने जमाने में मोटर-गाड़ी, ट्रैक्टर आदि तो थे नहीं, अतः सबने वहीं सक्खू का दाह संस्कार कर दिया और इस तरह से उसका अन्तिम संस्कार करके वह पंडित बोला - ठीक है, अब मैं जाऊँगा और उसके घर वालों से कह दूंगा कि तुम्हारी बहू वहां मर गयी है । सास-ससुर से कह दूंगा कि उसका मैंने संस्कार कर दिया । अब इधर रुक्मिणीजी ने देखा कि ठाकुरजी सक्खू के घर में बँधे पड़े हैं, अब जब तक सक्खू नहीं जायेगी तब तक ठाकुरजी बँधे रहेगें तो रुक्मिणीजी गयीं उसकी चिता पर और सब हड्डी इकट्ठा करके पानी छिड़का और सक्खू को जीवित कर दिया और बोलीं - अरी सक्खू ! तू जल्दी अपने घर जा । तेरे कारण प्रभु वहां नकली सक्खू बन करके बंद हैं और तू जितने दिन यहाँ रहेगी, भगवान् को कष्ट होगा, इसलिए तू जल्दी जा । रुक्मिणीजी का आदेश सुन करके सक्खू उठी और चलने लग गयी । उसके पहले वह पंडितजी पहुँच गए थे जिनके सामने वह मरी थी और उन्होंने उसका दाह संस्कार किया था । पंडित जी पहुँचे घर में और नकली सक्खू तो भीतर रसोई बना रही है । वह अन्दर पहुँचे और सक्खू की सास से बोले - अरे बुढ़िया, तेरी बहू मर गयी, बड़ी अच्छी थी, मैंने उसका दाह संस्कार कर दिया । बुढ़िया बोली - हमारी बहू मर गयी, अरे पंडितजी ! ये क्या कह रहे हो ? पंडितजी बोले - हाँ भाई,

बेचारी पंडरपुर में दर्शन करने गई थी, वहाँ उसकी मृत्यु हो गयी, वहां पर हम लोगों ने उसका अन्तिम संस्कार किया, तब तक ससुर आये और बोले - अरे पण्डितजी ! तुम यह क्या कहते हो, हमारी बहू तो यहाँ रोटी बना रही है । इतने में सक्खू का पति आया और पंडितजी से बोला – अरे ! आप क्या कहते हो, मेरी पत्नी तो यहाँ रोटी बना रही है । पंडितजी ने कहा –निश्चित रूप से भाई, मैं पंडरपुर में उसका दाह संस्कार करके आया हूँ । सक्खू के सास-ससुर और पति बोले -हम कैसे मान लें, हमारी बहू तो यहाँ घर में है । तब तक असली सक्खूबाई वहीं पहुँची नदी के किनारे, जहाँ से वह घड़ा रख के गयी थी । अब वहाँ ठाकुर जी उसकी सहेली का रूप बनाकर आये और उससे कहा कि अब तू जल्दी चली जा घर, ले यह घड़ा पानी का । सक्खू ने अपनी सहेली से पूछा – अरे ! तेरी पिटाई नहीं हुई, तू कैसे छूट के आ गई । सहेली बोली - पिटाई कुछ नहीं हुई, अब तू चली जा, घर में सब आनंद है, मंगल है, तू चिंता मत कर । सक्खू ने पूछा - ऐसा कैसे हुआ ? सहेली बोली - ये सब भगवान् की लीला है, उन सबकी बुद्धि शुद्ध हो गयी । अब सक्खू को क्या पता कि ये सहेली नहीं है, ये तो भगवान् हैं । वह घड़ा भर करके घर पहुँची तो सास ने देखा कि यह तो घड़ा लेके आ रही है, उसने पूछा – अरी बहू, तू घड़ा लेके कैसे आ रही है, अभी तो रोटी बना रही थी । अब तो डर के कारण सक्खू काँपने लग गयी । वह बोली - माता जी ! मुझको आप क्षमा कर दो । सास बोली - अरे क्षमा क्यों, तू तो हमारी बड़ी लाड़ली है, ऐसा कहके वह सक्खू से प्यार करने लग गयी । सक्खू सोचने लग गयी कि ये क्या हो गया । मैं तो समझती थी कि घर पहुँचते ही मेरी डंडों से पिटाई होगी । तब तक पति आया और सक्खू से बोला – अरे, तू पानी भरने कैसे गयी, अभी तो तू रोटी बना रही थी । सक्खू बोली - मैं रोटी कहाँ बना रही थी, वे लोग उसे घर के भीतर ले गए । अब घर के भीतर जो सक्खू के रूप में भगवान् थे, वह गायब हो गए । रसोई घर में आटा, बेलन, लकड़ी आदि सब पदार्थ गायब हो गए । सक्खू बोली – माताजी ! मैं पंद्रह दिन से यहाँ नहीं थी । सास ने कहा – झूठ बोलती है, पंद्रह दिन से तूने ऐसा भोजन बनाया, भोजन में गजब का स्वाद आता था । तब तक वह पंडितजी आ गए और बोले - सक्खू, तू तो पंडरपुर में मर गयी थी । सक्खू बोली - हाँ, मैं मर गयी थी । सास-ससुर बोले - ये क्या चक्कर है, समझ में नहीं आ रहा है, फिर बोले तू मर गयी थी । सक्खू ने कहा – हाँ, मैं मर गयी थी, फिर मुझको रुक्मिणीजी ने जिन्दा किया । आश्चर्यचकित होकर सास ससुर बोले - अरे ! तो इतने दिन तक यहाँ तेरे रूप में कौन रहा ? सक्खू बोली - यहाँ तो भगवान् द्वारिकाधीश ठाकुरजी रहे, मुझको रुक्मिणीजी ने बताया था कि तेरा वेश बना करके वहां भगवान् सेवा कर रहे हैं, तू जल्दी घर जा तो मैं दौड़ के यहाँ आई हूँ । तब तक पंडित जी और भी उस गाँव के दो गवाह बुला के लाये और बोले कि इन लोगों से पूछो । वे बोले - हाँ, ये सक्खू पंडरपुर में मर गयी थी और इसका वहां दाह संस्कार हुआ था किन्तु ये जो सामने खड़ी है, यह कौन है, क्या भूत-प्रेत है । तब सक्खू ने बताया कि रुक्मिणीजी ने मुझको जिन्दा किया और इस प्रकार मैं यहाँ आई हूँ । सक्खू की भक्ति को देख-सुनकर वहाँ के लोगों में भी भक्ति आ गई । अतः सक्खू के जीवन-चरित्र से हमें शिक्षा मिलती है कि यदि सक्खूबाई जैसी भगवान् के प्रति लगन हो तो सब काम बन जाता है, सहज में विशुद्ध प्रेममयी भक्ति की प्राप्ति हो जाती है ।

जनाबाई की भक्ति-शक्ति

श्रीबाबामहाराज के (एकादशी) प्रवचन (१०/३/२००६) से संग्रहीत

भारतवर्ष में मुस्लिम आतताइयों ने यहाँ की हिन्दू जनता के ऊपर इतना भीषण अत्याचार किया कि उस समय भक्तों ने ही देश को बचा लिया नहीं तो आज इस देश में एक भी हिन्दू नहीं रहता । इस्लामी शासन में देश के चारों कोनों में महान भक्त अवतरित हुए, जैसे - बंगाल में चैतन्य महाप्रभु, उत्तरप्रदेश में तुलसीदासजी, सूरदासजी, कबीरदासजी आदि, राजस्थान में मीरा, महाराष्ट्र में नामदेव-ज्ञानदेव आदि तथा दक्षिण भारत में आलवार संत; यदि ये संत-भक्त नहीं होते तो भारत में एक भी हिन्दू नहीं बचता, न धर्म रहता, न भक्ति रहती और न भगवान् का यश रहता । इसीलिए परशुरामदेवाचार्य जी ने कहा है-

संत हरि के बाप हैं, संत हरि के पूत ।
परशुराम जो संत न होते, रामहु जाते अऊत ॥

ये भक्त लोग ही भगवान् के पिता हैं, उनका यश फैलाते हैं और भगवान् के पुत्र हैं, भगवान् रक्षा करते हैं । भक्त नहीं होते तो राम भी निपूते हो जाते, संसार में उनका कहीं नाम नहीं रहता, कहीं भी नाम ही नहीं सुनाई पड़ता कि भगवान् क्या चीज हैं ।

राम सिन्धु घन सज्जन धीरा ।
चन्दन तरु हरि संत समीरा ॥

(श्रीरामचरितमानस, उत्तरकाण्ड -१२०)

समुद्र से पानी बादल बरसाते हैं, हम लोग समुद्र के पास नहीं जा सकते । भगवान् समुद्र हैं लेकिन किस काम के हैं अगर संत रूपी बादल न होंवे, चन्दन किस काम का अगर हवा नहीं होगी तो सुगंध तुम्हारे नाक में नहीं आएगी ।

संत और भक्त ही हवा हैं जो भगवान् का यश हमको देते हैं । महाराष्ट्र में एक ऐसी ही भक्त हुयी हैं, जिनका नाम जनाबाई था, ये नामदेव जी के परिकरों में थीं, वृद्धा थीं । नामदेवजी की कुटिया में बहुत से संत आते थे, उनको भोजन कराने के लिए ये अकेले ही उठ करके चक्की चलाकर आटा पीसती थीं । रात-रात भर चक्की चलाती थीं, वृद्धावस्था के कारण हाथ-पाँव नहीं चलते थे लेकिन ठाकुरजी एक खेल करते थे - ये चक्की चलाते समय कीर्तन करतीं, नेत्रों से आँसू बहते रहते तो भगवान् बिट्ठल इनके साथ चक्की चलाया करते थे । जनाबाई को पता नहीं पड़ता था, चक्की में दो किलो, पाँच किलो, दस किलो आदि जितना भी अन्न वह छोड़ देतीं, वह सब दो मिनट में ही पिस जाता था क्योंकि उसे ठाकुरजी पीस देते थे, इनको पता नहीं पड़ता था, ये तो समझती थीं कि मैं कीर्तन कर रही हूँ, भगवान् के नाम के प्रभाव से सब आटा पिस जाता है । पानी भरने जातीं, बुढ़िया थीं तो ठाकुर जी स्त्री का रूप धारण करके इनका पानी भरवा देते थे । पंडरपुर में चन्द्रभागा नदी है, उसके तट पर ये रहती थीं । एक दिन की बात है कि इनको रात में विरह सताया, ये अपनी कुटिया से निकल कर भागीं और एक मंदिर में घुस गयीं । प्रभु की इच्छा थी अतः इनके प्रेम को देख करके मंदिर का दरवाजा अपने आप खुल गया जबकि पुजारी लोग रात को मन्दिर का दरवाजा बंद कर देते हैं । जनाजी ने मंदिर खुला देखा तो भीतर चली गयीं और प्रेमावेश में रात भर नाचती रहीं और गोपाल को बुलाती रहीं । उसी बीच में कुछ चोर भी मन्दिर में आ गए । चोरों ने देखा कि मंदिर खुला है तो वे मंदिर में घुस गये और साक्षात् ठाकुरजी के हरिग्रीवा पदक (वक्षःस्थल का हार), जो बहुत कीमती था, उसको चोरी करके भाग गये किन्तु जनाबाई को कुछ पता नहीं पड़ा, वह तो आत्मविस्मृत होकर भगवत्प्रेम में नाचती रहीं । भक्तों से चिढ़ने वाले भी बहुत होते हैं बल्कि भक्तों से प्रेम करने वाले कम होंगे लेकिन चिढ़ने वाले ज्यादा होते हैं क्योंकि वे उनका यश देखकर चिढ़ जाते हैं और ऐसा सबके साथ हुआ है । श्रीतुलसीदासजी के ऊपर मारण मन्त्र का प्रयोग हुआ, मीराजी को भी बहुत यातनाएं दी गयीं, चैतन्यमहाप्रभु जी तो नदिया छोड़कर चले गये क्योंकि ईर्ष्यालु लोगों ने उनकी बहुत बदनामी की थी । कुढ़ने वाले पहले पैदा हो जाते हैं, गुलाब के पेड़ में फूल पीछे आएगा, काँटा पहले लग जाता है । इधर प्रातःकाल होने पर जब मन्दिर खुला तो पुजारियों ने देखा कि ठाकुरजी का 'हरिग्रीवा पदक' गायब हो गया है । सबने कह दिया कि चोर तो यह बुढ़िया

जनाबाई है । उससे पूछा गया तो वह बोली कि ठाकुरजी का हार मैंने नहीं लिया । लोगों ने उससे पूछा कि तू मन्दिर में कब आई थी तो वह बोली कि रात को आयी थी । सब बोले – "पकड़ लो ।" उसे पकड़कर न्यायालय ले गए, वहाँ सबने गवाही दे दिया कि यह खुद ही कह रही है कि रात भर मैं मन्दिर में रही । जज ने पूछा कि रात को तेरे अलावा और कोई भी मन्दिर में आया था, तो सीधी-सादी जना ने कह दिया कि रात को मन्दिर में मेरे सिवा और कोई नहीं आया । दुष्ट लोगों ने जज से कहा – "सरकार ! यह स्वयं गवाही दे रही है कि रात को मेरे अतिरिक्त मन्दिर में कोई और नहीं आया, तो और कौन चोर होगा? " लोगों के कहने से जना को सूली की सजा सुना दी गयी । सूली की सजा बहुत कष्टदायक होती है, फाँसी फिर भी अच्छी होती है । सूली में एक लोहे की बड़ी ऊँची सुई होती है और अपराधी को गुदा के सहारे उस सुई के ऊपर बैठा दिया जाता है और कष्ट के कारण जैसे-जैसे वह हिलता है, वैसे-वैसे वह सुई उसके शरीर के अन्दर घुसती जाती है । फाँसी में तो थोड़ी देर में आदमी मर जाता है किन्तु सूली में कई दिन लग जाते हैं मरने में, वह सबसे खराब मौत होती है । तलवार से काट दो, थोड़ी देर में आदमी मर जाएगा, बल्लम मार दो, थोड़ी देर में तड़प-तड़प के मर जाएगा परन्तु सूली की सजा सबसे खराब होती है । जो दुष्ट कुढ़ने वाले लोग थे, उनकी शिकायत पर जनाबाई को सूली की सजा दे दी गयी । दुष्ट लोगों ने प्रचार किया कि देख लो, ये बड़ी भगत बनती थी और इसके साथी लोग, ये सब बड़े चोर हैं, ठगते हैं दुनिया को, वैसे तो ढोलक बजायेंगे, झांज बजायेंगे, 'हरि-हरि' करते हैं लेकिन ये सब खाने-कमाने का धंधा है । जना चोर है, आज देख लो, इसे सूली की सजा दी जा रही है । हजारों लोग चंद्रभागा नदी पर इकट्ठे हो गये क्योंकि वहीं पर आज जना को सूली पर चढ़ाया जायेगा । भक्त लोग भी वहाँ गए कि हम प्रभु का कीर्तन करेंगे, प्रार्थना करेंगे ताकि वे जना की रक्षा करें । भगवन्नाम संकीर्तन ही सहारा होता है भक्तों का और तो कुछ सहारा होता नहीं है । वहाँ सब तरह के लोग गए और जना जी को चोर की तरह लाया गया । भक्त हर हालत में प्रसन्न रहता है । जनाबाई ने सोचा कि चलो विट्ठल की ऐसी ही इच्छा है तो ऐसे ही सही, जैसे भी विट्ठल खुश रहे, मुझे सूली दे रहा है, चलो कोई बात नहीं ।

बिट्ठल चाहे सूली दे दे, बिट्ठल चाहे माला दे दे,
मैं तेरी हूँ...मैं तेरी हूँ ...।

चाहे तू माला पहना, चाहे तू सूली दे, मैं खुश हूँ । इसी को भक्ति कहते हैं । हे गोविन्द !

ऐसा प्यार दे सूली भी फूलों की शैया हो जाए ।

भीष्म पितामह बाणों की शैया में पड़े थे लेकिन भगवान् का भजन करते रहे, कृष्ण आये तो वे बाण उनके लिए बाण नहीं रहे, फूल जैसे बन गए थे ।

ऐसा प्यार दे अंगारे जलते भी शीतल हो जायें ॥

प्रह्लाद के लिए आग भी शीतल हो गयी, विश्वास रखो ।

ऐसा प्यार दे पर्वत भी टकरा-टकरा गिर जावें ।

प्रह्लाद को पहाड़ों से गिराकर मारा गया तो पहाड़ टूट गए ।

ऐसा प्यार दे सागर भी लहरा-लहरा तर जाए ।
विट्ठल चाहे शूली दे दे, विट्ठल चाहे माला दे दे,
मैं तेरी हूँ...मैं तेरी हूँ ...।

जनाबाई को लाया गया, उन्हें देखकर जितने भक्त थे, सब रो रहे थे, वे कह रहे थे – "हे प्रभो ! ये बुढ़िया के साथ क्या हुआ? " लेकिन जनाबाई खुश है ।

ले, ले नाम तेरा मैं विट्ठल जा पकड़ूँगी सर्प जाल ।

अरे विट्ठल! तेरा नाम लेके मैं सर्पों से लिपट जाऊँगी, मुझे कोई दुःख नहीं होगा ।

ले, ले नाम तेरा मैं विट्ठल जा लिपटूँगी विकट काल ।

ये शूली भयानक काल है लेकिन तेरा नाम ले-ले कर मैं इससे लिपट जाऊँगी । इसे भक्ति कहते हैं ।

ले, ले नाम तेरा मैं विट्ठल विष पी लूँगी हलाहाल ।
ले, ले नाम तेरा, मैं विट्ठल नाचूँगी घुस ज्वाल माल ।

आग में घुस जाऊँगी, मुझे डर नहीं है ।

ऐसा प्यार दे सागर भी लहरा-लहरा तर जाए ।
विट्ठल चाहे शूली दे दे, विट्ठल चाहे माला दे दे,
मैं तेरी हूँ...मैं तेरी हूँ ...।
विट्ठल मेरो प्राण विट्ठल मेरो प्राण,
गोविन्द मेरो प्राण, गोविन्द मेरो प्राण ।
गोपाल मेरो प्राण, गोपाल मेरो प्राण,
गोविन्द मेरो प्राण, गोपाल मेरो प्राण ।

जनाबाई को देखकर भक्त लोग रो रहे थे और दुष्ट लोग हँस रहे थे कि देख लो, कीर्तन करने वालों का यही मजा होता है, बड़े नाचते थे, ढोलक बजाते थे । जब जनाबाई को सूली के ऊपर बैठाला गया तो सारा संसार देख रहा था, वह लोहे की सूली थी, वह जंग लगा हुआ लोहा नहीं होता है, वह तो फौलाद होता है और उस सूली पर जैसे ही जनाबाई को बैठाया गया तो वह सूली मोम की तरह पिघल गयी और आराम से जनाबाई जमीन पर आ गयीं और विट्ठल भगवान् का संकीर्तन करती रहीं, सारा संसार देख करके आश्चर्य में हो गया; ये जनाबाई की भक्ति-शक्ति का अलौकिक चमत्कार था, इसलिए भक्ति ही सबसे बड़ी शक्ति है, जिसके आगे सब शक्तियाँ शून्य हो जाती हैं ।

सच्चे गुरु-भक्त की कथा

ब्रजबालिका मुरलिकाजी द्वारा अमेरिका में कही हुई कथा से संकलित

श्रीभक्तमालजी में एक विचित्र चरित्र है – एक गुरुजी थे, उनका शिष्य बहुत आज्ञाकारी था; एक बार वह कोई यात्रा करने जा रहा था तो उन्होंने उससे कहा कि तुम यात्रा कर आओ फिर मैं तुमको एक जरूरी बात बताऊँगा । शिष्य बोला – "गुरुजी ! इतनी जरूरी बात है तो अभी बता दीजिये, समय का क्या भरोसा कि भविष्य में क्या होगा ?" गुरुजी बोले – "नहीं-नहीं, भरोसा करो, तुम यात्रा कर आओ तब मैं तुम्हें बताऊँगा ।" जब यात्रा करके शिष्य लौटा तब तक गुरुजी धाम को पधार चुके थे । गुरुजी के अन्य शिष्य बहुत रोने लगे । उन शिष्यों को रोते देख यह शिष्य बोला – "अरे, आप लोग ! क्यों रोते हो, गुरुजी कहीं नहीं गए हैं, वे जाने का नाटक कर रहे हैं क्योंकि गुरुजी ने मुझसे कहा था कि तू जब यात्रा से लौटकर आयेगा तो तुझे कुछ जरूरी बातें बताऊँगा और मुझे गुरुजी की बात पर शत-प्रतिशत विश्वास है कि जब तक वे मुझे जरूरी बात नहीं बता देंगे तब तक वे कहीं नहीं जायेंगे, तुम लोग रोओ मत ।" अब ये अन्य शिष्यजन तो गुरुजी की अंत्येष्टि की तैयारी कर रहे थे और यह हठी शिष्य उनके पीछे लग गया कि तुम लोग कैसे इनका अंतिम संस्कार करोगे, मैं देखता हूँ । मेरे गुरुजी कहीं नहीं गये हैं, वे तो केवल मरने का नाटक करके पड़े हैं । इस शिष्य की शिष्यता इतनी पक्की थी । आगे यह हुआ कि गुरुजी तो वास्तव में भगवद्धाम चले गये थे किन्तु बाकी शिष्य मान नहीं रहे थे क्योंकि वे आयु में भी बड़े थे और इस निष्ठावान शिष्य की बात मान नहीं रहे थे, कह रहे थे कि मूर्ख कहीं का हटता नहीं है; अरे, मरने का भी कोई नाटक होता है, छोड़ गुरुजी को, उनका अंतिम संस्कार हो जाने दे । ऐसा कहके वे जबरन गुरुजी का अंतिम संस्कार करने के लिए ले जाने लगे तो वह शिष्य आर्त भाव से पुकारा - "हे मेरे पूज्य गुरुदेव ! मुझे पता है कि आप मरने का नाटक कर रहे हो, आप मुझे जो आवश्यक बात बताने वाले थे, अपने शरीर में शीघ्र ही आकर मुझे बताइए ।" वह चेला इतना पक्का था कि सातों लोकों का भेदन करके, विरजा नदी को पार करके गुरुजी नित्य गोलोक धाम में जहाँ ठाकुरजी के साथ विराजमान थे, उसकी आवाज वहाँ पहुँच गयी । ठाकुरजी ने गुरुदेव से कहा – "गुरुजी ! आपका चेला बुला रहा है, उसके पास नीचे जाओ, आप तो समय से पहले यहाँ आ गये हो, शीघ्र ही नीचे जाइये ।" जब भगवान् ने इस प्रकार उन्हें आज्ञा दी तो गुरुजी बोले – "ठीक है प्रभो ! जब आप मुझे आज्ञा देते हैं तो मैं जाता हूँ, सच में उस शिष्य के साथ मैंने ठीक नहीं किया, मैंने उससे कहा था कि मैं तुम्हें एक आवश्यक बात बताऊँगा ।" थोड़ी ही देर में उस शिष्य के शिष्यत्व के प्रभाव से गुरुजी के मृतक देह में एकदम से प्राण का संचार हुआ और गुरु जी उठके बैठ गये । बाकी के चेलों ने तो उनके अंतिम संस्कार के लिए लकड़ियाँ भी इकट्ठा कर ली थीं । अब तो वह शिष्य अति प्रसन्नता के साथ उन शिष्यों (गुरुभाइयों) से बोला – "अरे, भाई ! मेरे जीवित गुरुदेव को जलाने का काम आप लोग कर रहे थे, ये कितना बड़ा पाप कर रहे थे, मैंने कहा था न कि मेरे गुरु जी मरे नहीं हैं, देखो - अब मेरे गुरु जी आ गये हैं ।" उस शिष्य ने गुरुदेव से कहा – "गुरुजी ! अब बताइए आप मुझे क्या जरूरी बात बताने वाले थे ?" उस शिष्य से गुरु जी बोले – बेटा ! एक

बात मैं तुझे बताने से रह गया, बाकी तो सब पाठ मैंने तुझे पढ़ा दिया, वह बात यह है कि जैसी आदर-बुद्धि तू मुझमें रखता है, ऐसी ही आदर-बुद्धि संसार के सभी संतों में रखना क्योंकि यदि तू केवल मुझमें ही गुरु-बुद्धि रखेगा तो मैं हमेशा तो इस संसार में रहने वाला हूँ नहीं, कभी न कभी तो मुझे भगवद्धाम जाना ही पड़ेगा और यदि मैं कभी ऊपर पहुँच गया तो फिर तुझे लगने लगेगा कि अब गुरुजी तो ऊपर पहुँच गये, अब जो करना है करो, कौन देखने वाला है ? इसलिए बेटा, मैं तुझे एक बात बताने से रह गया कि जैसा गुरु भाव तू मुझमें कर रहा है, वैसा ही गुरु-भाव संसार में समस्त संतों के प्रति करना ताकि तू सदैव गुरुजनों की छत्रछाया में रहे और तुझे कभी भी 'गुरुतत्त्व' का अभाव न दिखे क्योंकि कबीरदासजी की वाणी है –

गुरु मरे और चेला रोया । कहैं कबीर दोनों ने खोया ॥

अगर गुरुदेव की मृत्यु होने पर चेला रोता है तो इसका मतलब यही है कि गुरु की गुरुता में भी कमी है और चेला के चेलापन में भी कमी है क्योंकि सच्चा गुरु कभी मर नहीं सकता, वह चेले के अंदर कहीं न कहीं गुरुभाव स्थापित करके ही जायेगा कि अब मैं तो इस संसार से जा रहा हूँ किन्तु ये श्रेष्ठ महापुरुष हैं, तुम सदा इनके आश्रय में बने रहना, अपने जीवन में कभी उच्छृंखलता मत आने देना कि अब हमारे सिर से तो गुरुजी का हाथ उठ गया, अब मनमानापन करो, ऐसा नहीं करना । श्रेष्ठ पुरुषों में गुरुता का ही भाव रखना, उनको गुरु ही मानना और जो चेला 'संत मात्र' में गुरु-भाव नहीं कर पाया, उसको गुरुजी की मृत्यु के पश्चात् रोना ही पड़ेगा, इसका मतलब यही हुआ कि वह गुरुजी की शिक्षा को ठीक तरह से ग्रहण नहीं कर पाया । इसीलिए कबीरदासजी ने कहा – "कहें कबीर दोनों ने खोया, गुरु मरे और चेला रोया ।" सच्चे गुरु ये दिखाकर जायेंगे कि गुरुतत्त्व कभी मरता नहीं है । सिखाने वाले संसार से कभी नहीं जायेंगे, संसार में अच्छे-अच्छे पथ प्रदर्शक, अच्छे-अच्छे दिशा निर्देशक, अच्छे-अच्छे कर्णधार, अच्छे-अच्छे प्रेरणास्रोत तुम्हें मिलते ही रहेंगे बेटा, कभी भी घबराना मत । जो तुमने मुझे गुरुतत्त्व माना है तो मैं ही किसी न किसी महापुरुष में बैठकर तुम्हें आदेश देता रहूँगा, मैं ही किसी न किसी संत के हृदय में बैठकर तुम्हें आदेश देता रहूँगा; इस प्रकार यह गुरुतत्त्व है । अतः महापुरुषों के आश्रय के बिना, गुरुजनों के आश्रय के बिना, भगवद्भक्तों के आश्रय के बिना न तो भगवन्नाम में प्रीति हो सकती है, न धाम की महिमा को ठीक से जाना जा सकता है और न ही भक्ति को ठीक से जाना जा सकता है । शोभित तिलक भाल माल उर राजे ते, बिना भक्तमाल भक्ति रूप अति दूर है । तऊ दुराराध्य कहो कैसे के आराधि सकै । भक्तों के आश्रय के बिना धाम की भक्ति को जानना, नाम की भक्ति को जानना, भक्तों की भक्ति को जानना अत्यंत कठिन है । ब्रजभूमि के माहात्म्य को विस्तार से प्रकाशित करने वाला जो ग्रन्थ है "रसीली ब्रजयात्रा" इसके कागजों को काला करने का कार्य अवश्य मेरे शरीर द्वारा हुआ है किन्तु इसके प्रकाशन का सर्वप्रमुख श्रेय तो श्रीबाबामहाराज का ही है । हमारे पूज्य सद्गुरुदेव ६५ वर्ष पूर्व १६ वर्ष की अवस्था में ब्रज में आये और आज तक वे अखण्ड ब्रजवास कर रहे हैं, वे कभी ब्रज के बाहर नहीं गये । ६५ वर्षों में उन्होंने ब्रज में जहाँ-जहाँ भी भ्रमण किया, अच्छे-अच्छे आर्ष ग्रन्थों का आश्रय लिया, उनका अध्ययन किया और पैंसठ वर्षों का जो उनका चिन्तन है, जो उनका अनुसन्धान है, उनकी खोज है, उसे उन्होंने इस ग्रन्थ के रूप में प्रकट किया । इस ग्रन्थ की प्रामाणिकता अपने आप ही इसलिए पुष्ट है क्योंकि इसमें अपनी ओर से ऐसी कोई बात नहीं कही गयी है कि अपना कोई मत थोपने की बात है अथवा अपनी बात रखने का कोई आग्रह है । यह सम्पूर्ण ग्रन्थ आर्ष वाणियों पर आधारित है, आर्ष ग्रन्थों पर ही आधारित है । यहाँ तक कि इस ग्रन्थ की रुपरेखा जहाँ से शुरू होती है और जहाँ विश्राम लेती है, जैसे इस ग्रन्थ के प्रथम खंड के प्रारम्भ में बताया गया है कि धाम की उपासना कैसे की जाये, धाम वास कैसे किया जाये, धाम वास के क्या नियम हैं, धाम की परिक्रमा क्यों आवश्यक है, उसके क्या लाभ हैं, ये सब बातें ग्रन्थों के आधार पर बहुत प्रामाणिकता से रखी गयी हैं । इस ग्रन्थ में कोई मनगढ़ंत बात नहीं लिखी गयी है, इसलिए ग्रन्थ की प्रामाणिकता अपने आप पुष्ट है ।

सहनशील व कीर्तननिष्ठ 'श्रीसदन कसाईजी'

श्रीबाबामहाराज के 'एकादशी-सत्संग' (२१/०८/२०१४) से संकलित

परम पूज्य श्रीबाबामहाराज एकादशी के दिन रासेश्वरी विद्यालय के बच्चों एवं ब्रजवासियों को संबोधित करते हुए – आज हम तुमको सदन कसाईजी की कथा सुनाते हैं । कसाई उसे कहते हैं जो गाय, बैल आदि को काटता है । सदनजी कसाई होने के बाद भी भक्त थे । भक्ति कोई भी करे फिर चाहे वह नीच जाति का चमार है, भंगी है, राक्षस है अथवा असुर जाति में उत्पन्न है, जो भी भक्ति करता है, भगवान् का भजन करता है, वह भक्त है –

जाति पाति पूछै न कोय ।
हरि को भजै, सो हरि का होय ॥

सदनजी कसाई जाति के होकर भी भगवान् के भक्त थे । मनुष्य अपने पूर्व जन्म के कर्मों के अनुसार ऊँची तथा नीची जाति में उत्पन्न होता है । अगर पिछले जन्म के कर्म खराब होते हैं; तो मनुष्य छोटी जाति प्राप्त करता है, अच्छे कर्म होते हैं तो अच्छी जाति (ब्राह्मण जाति) में जन्म होता है । पिछले जन्म में सदनजी बहुत बड़े तपस्वी ब्राह्मण थे तथा संसार त्यागकर जंगल में भजन कर रहे थे । एक बार एक गाय बड़ी तेजी से भागती जा रही थी क्योंकि एक कसाई मारने के लिए उसे पकड़ना चाहता था । वह गौमाता भागती-भागती जहाँ इनकी जंगल में कुटिया थी; वहीं से निकल रही थी और उसे पकड़ने के लिए वह कसाई उसके पीछे-पीछे दौड़ता आ रहा था । गाय भागती हुई इनकी कुटिया के सामने से निकली, पीछे से कसाई गाय को ढूँढते-ढूँढते आया । उस समय सदनजी कुटिया के बाहर बैठकर के भजन कर रहे थे, कसाई ने इनसे पूछा – "महाराज ! इधर से कोई गाय भागती-भागती गयी है?" इन्होंने मन में सोचा कि साधु को सत्य बोलना चाहिए, इसलिए मैं बता देता हूँ । अतः इन्होंने हाथ उठाकर कहा – "हाँ ! इधर की तरफ गयी है ।" उस कसाई ने जा करके गाय को पकड़ लिया और ले जाकर के मार डाला । उस पाप के कारण इस जन्म में सदनजी को कसाई बनना पड़ा क्योंकि उन्होंने हाथ से इशारा किया था और तब जाकर के कसाई गाय को पकड़ पाया था । अगर ये हाथ से संकेत नहीं करते तो वह कसाई गाय को नहीं पकड़ सकता था क्योंकि गाय बड़ी तेजी से भाग रही थी । इसी कारण इनको इस जन्म में कसाई बनना पड़ा । जिस घर में ये पैदा हुए थे, वहाँ यही गौहत्या का पाप होता था, बैल-गाय आदि काटे जाते थे । उस पिछले जन्म के पाप के कारण इनका जन्म एक कसाई घर में हुआ । एक दिन इनके परिवार के सदस्यों में से किसी का विवाह था, विवाह में बहुत से मेहमान आये हुए थे । विवाह की ज्योनार (पंगत) हो रही थी । कसाई लोग माँस तो खाते ही हैं इसलिए एक बैल लाया गया था और उस बैल को विवाह में उपस्थित लोग काटने वाले थे । सदन छोटे-से थे और इन्होंने पूर्व जन्म में भजन किया था, इसलिए बचपन से ही इनके हृदय में दया थी, हिंसा नहीं थी । इन्होंने अपने पिताजी से पूछा – "आज घर पर इतनी भीड़ क्यों है ?" पिताजी –"आज तुम्हारे चाचा का विवाह है ।" सदन – "ये बैल क्यों आया है ?" पिताजी – "इसे काटा जायेगा, विवाह के भोज के लिए हम लोग काटेंगे ।" यह सुनकर कि इस बैल को काट दिया जायेगा तो इनको बैल पर अत्यंत दया आयी और ये बैल के पास जाकर उससे लिपटकर रोने लग गये । जब यह बैल से लिपट कर रोने लग गये तो बैल मनुष्य की भाषा में धीरे से बोला – "सदन ! तुम रोओ नहीं, हर आदमी अपने किये हुए कर्मों का फल भोगता है, कर्मफल अवश्य भोगना पड़ता है; उससे कोई बच नहीं सकता ।" श्रीबाबा महाराज उपस्थित बच्चों को सम्बोधित करते हुए – "इसलिए तुम लोग अभी बच्चे हो, गलत संग नहीं करना । गलत संग से आदमी निंदनीय कार्य सीखता है और फिर उसका दण्ड भोगना पड़ता है ।" अस्तु, इन्होंने बैल से पूछा कि पिछले जन्म में ऐसा तुमने कौन-सा कार्य किया था जिससे तुमको ये लोग काटने जा रहे हैं ? बैल ने कहा – "हमने पिछले जन्मों में इनकी हत्या की थी, इसलिए अब ये हमको मारेंगे किन्तु हमको कोई दुःख नहीं है क्योंकि हमने पिछले जन्म में भजन भी किया और भजन करने वालों को अच्छी बुद्धि मिलती है, चाहे वे किसी भी योनि में; कहीं भी चले जाएँ । अच्छी बुद्धि से वे अच्छे काम करते हैं । भजन कभी नष्ट नहीं होता । पैसा नष्ट हो जायेगा, शरीर नष्ट हो जायेगा (ये शरीर भी तो एक दिन जलेगा), धन-

सम्पत्ति, मकान सब नष्ट हो जायेंगे । स्त्री, पुत्र, पिता-माता सब मर जायेंगे । कोई भी यहाँ (मृत्युलोक पर) नहीं रहेगा । कबीरदासजी ने कहा है –

साधो ये मुर्दों का गाँव ।

पीर मरे पैगम्बर मरिहें, मर गये जिंदा जोगी ।
राजा मरिहै परजा मरिहे, मर गये वैद्य ओर रोगी ।
चंदा मरिहें सूरज मरिहें, मरिहें धरती आकाश ।
चौदह भुवन के चौधरी मरिहें, इनहू की का आश ।
नाम अनाम अनन्त रहत है, दूजा तत्त्व न होई ।
कहे कबीर सुनो भाई साधो, भटक मरो मत कोई ॥

ये सारा संसार मृत है । जितने भी हम लोग हैं, सब मुर्दे हैं । कोई जिंदा नहीं रहेगा । कोई १० साल बाद मरेगा, कोई २० साल, कोई ५० साल बाद, सब मर जायेंगे । इसलिए थोड़े-से जीवन में भजन करना चाहिए । भजन कभी नहीं मरता है । इन्होंने (सदनजी) उस बैल से पूछा कि तुमको दुःख नहीं है ? उस पर बैल ने उत्तर दिया कि नहीं, मैंने जो कर्म किया है, उसको भोगने से छुट्टी मिल जाएगी । तुम भी भजन करना । अब तुम जाओ, ये लोग मुझको मारेंगे । सदन वहाँ से हट गए और उस बैल को पकड़ के लोग ले गए तथा उन्होंने उसको मारा व उसके शरीर को काटकर माँस पकाया गया, जितने भी कसाई अतिथि थे, उन सबका भोजन हुआ । सदन छोटे-से लड़के थे लेकिन उस दिन से उन्होंने सोच लिया कि मैं कसाई हूँ लेकिन किसी जीव की हिंसा नहीं करूँगा । ये भजनपरायण हो गये और जब माँ-बाप कहते थे कि हम बैल पकड़कर लाये हैं, तू इसको काट तो ये कहते थे कि मैं इसे नहीं काटूँगा । माता-पिता कहते थे कि नहीं काटेगा तो खाएगा क्या ? सदन कटा-कटाया माँस लाके बेचते थे और उसी से इनका निर्वाह होता था । इन्होंने अपना ब्याह नहीं कराया क्योंकि इन्हें ज्ञान हो गया था कि संसार झूठा है, थोड़ी देर में हम मर जायेंगे । धन-सम्पत्ति, परिवार, माँ-बाप, स्त्री-पुत्र आदि सब झूठे हैं, सच्चा तो केवल भगवान् का भजन है । जब पुण्य उदित होते हैं तब सत्संग मिलता है, एक चौपाई है –

पुन्य पुंज बिनु मिलहिं न संता ।
सतसंगति संसृति कर अंता ॥

(श्रीरामचरितमानस, उत्तरकाण्ड - ४५)

अच्छे कर्मों के फलस्वरूप साधु संग मिलता है । संत संग यदि मिल गया तो हमारा संसार खत्म हो जाएगा ।

हम भजन सीखेंगे और करेंगे तो संसार से मुक्त हो जायेंगे । (श्रीबाबा बच्चों से - तुम लोगों (बच्चों) ने पूर्व जन्म में कोई बहुत ज्यादा पुण्य किये हैं, जिसके परिणामस्वरूप बचपन से ही तुम लोग यहाँ सत्संग में आ गये हो । हमसे तुम लोग बहुत ज्यादा अच्छे हो, हम तो पढ़ने लिखने में लगे रहे और बड़ी मुश्किल से गह्वरवन वास मिला । तुम लोग तो बचपन से ही यहाँ आ गए, ये तुम्हारे पिछले जन्मों के पुण्य हैं अन्यथा साधु-संग अत्यधिक दुर्लभ है । लोग साधु बन जाते हैं लेकिन उनसे भजन नहीं हो पाता है । तुमको तो दिन-रात भजन मिल गया है ।) सदन जी अपनी दुकान पर माँस बेचते थे । एक दिन एक संत इनकी दुकान के सामने से निकले, सदन ने उन्हें प्रणाम किया क्योंकि वह भजन करते थे । संत ने देखा कि लड़का तो बड़ा अच्छा है क्योंकि भजन कर रहा है । सदन ने संत से कहा – "महाराज ! मुझको भी कोई अच्छा रास्ता बताओ ।" सदन की बात सुनकर संत वहीं रुके और उन्होंने अपने पास रखे शालिग्राम विग्रह की सेवा की । ठाकुर सेवा करते हुए सदनजी ने देखा तो उन्होंने संतजी से शालिग्राम जी को माँग लिया । सदन बोले – "महाराज, मुझे अपने ठाकुर जी दे दीजिये, मैं इनकी सेवा करूँगा ।" पहले तो संतजी ने बहुत मना किया फिर जब सदन ने बहुत हठ किया कि मुझको तो भगवान् की सेवा करनी है, आप मुझे अपने ठाकुरजी नहीं देंगे तो मैं भोजन नहीं करूँगा तब संतजी ने अपने ठाकुरजी दे दिये और सदन जी अपने घर में शालिग्रामजी को लाए तथा उनको संतजी की ही तरह नहलाते-धुलाते थे, संत जी की तरह जो कुछ रूखा-सूखा मिलता, उन्हें भोग लगाते । भगवान् बच्चों पर बहुत प्रसन्न रहते हैं और उन्हें जल्दी मिल जाते हैं क्योंकि उनमे अहं नहीं होता है । एक दिन सदन शालिग्रामजी को छोड़ के दुकान पर जा रहे थे तो शालिग्रामजी बोले कि मुझको छोड़के क्यों जाता है, मुझे भी साथ ले चल । भगवान् प्रेम के आधीन हैं । सदन शालिग्रामजी को अपने साथ ले गये तो वे माँस की दुकान पर तौलने वाला बटखरा बन गये । शालिग्रामजी बोले - "आज से तू मुझसे माँस को तौला

कर, तू जितना भी माँस तौलेगा मैं उसी के बराबर अपना वजन कर लूँगा । जिसको भी माँस तोलकर देगा तो मैं तेरे बटखरे का काम करूँगा, तराजू के एक पलड़े पर मुझको रख लिया कर और दूसरे पलड़े पर माँस रखा कर, जिसको जितना माँस चाहिए, मैं उतने वजन का हो जाया करूँगा । कोई ग्राहक आकर कहता कि पाव भर माँस दे दो तो सदन जी शालिग्रामजी रखकर तौल देते थे और वह माँस पाव भर ही निकलता था, किसी ने कहा कि मुझको एक किलो माँस दे दो तो शालिग्रामजी एक किलो बन जाते थे । इस तरह से कुछ दिन चलता रहा । एक दिन एक संत वहाँ से होकर गुजरे और उन्होंने देखा कि अरे ! ये माँस की दुकान पर शालिग्राम जी, ये तो गलत बात है । उन्होंने सदनजी से जाकर कहा कि तू तो पाप करता है । सदन ने पूछा – "कौन-सा पाप महाराज ?" संत बोले – "शालिग्रामजी से तू माँस तौलता है, ये तो भगवान् हैं, इनसे गलत काम नहीं करना चाहिए । ला, ये शालिग्रामजी मुझको दे दे ।" संत ने सदन से शालिग्रामजी को ले लिया और वह महात्मा की बात को टाल नहीं सके और उन्हें ठाकुरजी को दे दिया । शालिग्रामजी को ले गए संत भगवान् और उन्हें पंचामृत से स्नान कराया । संत 'शालिग्रामजी' से बोले – "महाराज ! आप गन्दी जगह रहते थे, वह जगह अशुद्ध थी ।" जब वह संत 'शालिग्रामजी' को स्नान कराकर, भोग लगाकर सोए तो रात में ठाकुरजी ने उनसे स्वप्न में कहा – "अरे भाई ! तू मुझे वहीं सदन के पास पहुँचा दे, मुझे तो वहीं अच्छा लगता है, जल्दी पहुँचा ।" संतजी सुबह उठे और जल्दी से शालिग्रामजी को सदन कसाई के पास ले गये और बोले – "अरे भैया ! वैसे तो यह पाप है लेकिन क्या करें, प्रभु की ऐसी ही इच्छा है, वे तेरे बिना नहीं रह सकते ।" उन्होंने सदनजी को शालिग्रामजी दे दिया और वे हर समय कीर्तन करते, हर समय गाते रहते थे । भगवान् उनसे इसीलिए खुश हुए क्योंकि वह दुकान पर माँस भी तौलते किन्तु हर समय कीर्तन करते रहते थे – **गोविन्द हरे गोपाल हरे, जय-जय प्रभु दीनदयाल हरे । घनश्याम हरे नन्दलाल हरे, जय-जय यशोदा के लाल हरे ॥**

भगवान् उनसे प्रसन्न रहते थे क्योंकि हर काम को करते-करते वह भजन करते थे । (श्री बाबा मान मन्दिर गुरुकुल के बच्चों से- तुम लोग भोजन करने जाते हो तो कीर्तन करते हो, आते हो तब भी कीर्तन करते हो । यही रास्ता है जीवन को सफल बनाने का ।) एक दिन सदनजी के पास एक संत आए, वे जगन्नाथ पुरी जा रहे थे । वहाँ प्रति वर्ष रथयात्रा होती है । सदनजी ने संत से पूछा – "कहाँ जा रहे हो महाराज ?" वह बोले – "मैं जगन्नाथ भगवान् के दर्शन करने पुरी जा रहा हूँ ।" सदनजी ने पूछा – "क्या मैं भी वहाँ जा सकता हूँ ?" संत बोले – "हाँ, तुम भी जा सकते हो, वहाँ कोई रुकावट नहीं है ।" अब तो सदन जी अकेले ही चल पड़े । उस जमाने में गाड़ियाँ, मोटर आदि यातायात के साधन नहीं थे, अतः सदन जी पैदल जा रहे थे । अब ये जवान हो गए थे । जब ये पुरी जा रहे थे तो रास्ते में एक खेत मिला । उन्होंने सोचा कि शाम हो गई है, अतः आज रात यहीं रुक लेना चाहिए । वहाँ घर में किसान की एक युवा, सुंदर स्त्री थी । सदनजी को भूख लगी तो वह उसके पास गए और बोले – "माँ, रोटी दे दे ।" वह स्त्री इनको देखके मोहित हो गई और बोली – "हाँ-हाँ, यहीं बैठकर भोजन कर लो ।" सदन जी बैठ गए और उस स्त्री ने खीर आदि स्वादिष्ट व्यंजन बनाकर इन्हें बढ़िया भोजन कराया क्योंकि उसका इनके प्रति गलत भाव था । भोजन कराने के बाद उस स्त्री ने इनसे कहा – "महाराज ! यहीं सो जाओ ।" उसने दूर झोपड़ी में बिस्तर डाल दिया और ये सो गए (उस झोंपड़ी में उसका पति सोता था ।) यह स्त्री कौन थी ? यह सदनजी के पूर्व जन्म की वही गाय थी जिसके लिए उन्होंने एक कसाई को हाथ के संकेत से बता दिया था कि वह उधर गई है और फिर कसाई ने उस गाय को पकड़ कर मार डाला था । अब वही गाय इस जन्म में स्त्री बनके यहाँ बदला लेने आई । सदनजी वहाँ सो गए और वह स्त्री रात को उनके पास आई तथा इनसे लिपटने लग गई । सदन जी बड़े भजनानन्दी थे, दिन-रात भजन करते थे, उन्होंने उस स्त्री के गलत आचरण पर उसे रोका, उससे कहा – "माँ, तेरा पति तो वहाँ है, उसके पास चली जा ।" वह बोली – "नहीं, मैं तो तेरे पास सोऊँगी ।" इन्होंने कहा – "नहीं, ऐसा नहीं हो सकता है । तुम्हारा पति जीवित है, तुम उसको क्यों छोड़ती हो ?" वह स्त्री मानी नहीं और उसने सदन जी के साथ लेटने की कोशिश की

किन्तु इन्होंने उसे मना कर दिया और बोले - जब तेरा पति जीवित है तो तू मेरे पास क्यों आई है लेकिन ये तो पूर्व जन्म के कर्म थे, वह स्त्री गई और उसका पति जहाँ सो रहा था, एक धारदार हथियार से स्त्री ने उसका सिर काट दिया । यह वही कसाई था, जिसने गाय को काटा था और वही गाय अब स्त्री बनके उसका सिर काट रही है । सिर काटके वह स्त्री आई और सदन जी से लिपट गई तथा बोली – "देखो, अब तो मेरा पति जीवित नहीं है, मर गया है, अब तुम मुझसे सम्पर्क करो ।" सदन जी घबड़ा गए और बोले कि मैं तो ऐसा नहीं कर सकता, गलत काम कभी नहीं करूँगा माता । अब तो उस स्त्री को बड़ा गुस्सा आया, वह सोचने लगी कि मैंने इसके लिए अपने पति का सिर काटा और फिर भी ये खुश नहीं हुआ, अब क्या होगा ? अब सबेरे लोग उठेंगे, मेरे पति की हत्या का समाचार सुनकर थोड़ी देर में हल्ला मचेगा और फिर लोग मेरे बारे में शंका करेंगे कि इस स्त्री ने अपने पति का सिर काटा । इसके बाद मुझे मृत्यु दंड की सजा दी जाएगी । अतः मौत की सजा से बचने के लिए उस स्त्री ने गाँव में हल्ला मचा दिया – "अरे बचाओ, बचाओ, बचाओ ।" लोग दौड़ के गए और उससे पूछा – "क्या है ?" स्त्री बोली – "देखो, ये बदमाश मेरे साथ दुराचार करना चाहता था । मैंने कहा कि मैं विवाहित हूँ, मेरा तो पति है तो इसने जाकर मेरे पति का सिर काट दिया । अब मैं क्या करूँ ?" ऐसा कहकर वह रोने लग गई । गाँव वालों ने सदन कसाई को पकड़ लिया जबकि उनकी कोई गलती नहीं थी, उनका कोई दोष नहीं था लेकिन लोगों ने सदन जी को पकड़ के उनके नाम रिपोर्ट कर दी कि ये हत्यारा है । मुकदमे की सुनवाई हुई, जज बैठा, उसने सदन जी से पूछा – "क्या नाम है तुम्हारा ?" वे बोले – "मेरा नाम सदन है ।" जज ने कहा- "क्या तुमने इस स्त्री के पति को मारा ?" (अब देखिये इसको संत कहते हैं) सदन जी ने सोचा कि अगर मैं कहूँगा कि मैंने नहीं मारा तो लोग कहेंगे कि स्त्री ने अपने पति की हत्या की । इस बेचारी स्त्री ने मुझको खीर खवाई थी, मेरा सत्कार किया था तो यह मेरा धर्म है कि मैं इसको बचाऊँ । मुझे यदि फाँसी हो जावे तो कोई बात नहीं । भगवान् के नाम पर मरने में कोई नुक्सान नहीं है । विश्वास चाहिए, विश्वास से भगवान् मिलते हैं । जज ने सदनजी से फिर से पूछा- "क्या तुमने इस स्त्री के पति को मारा ?" इन्होंने कहा – "जी हाँ ।" जज बड़ा बुद्धिमान था, उसने इनकी बात सुनके समझ लिया कि इसने नहीं मारा है, ये तो बड़ा अच्छा आदमी लगता है, इसकी बोली में मिठास है, यह हत्यारों की तरह कड़ाई से नहीं बोल रहा है । जज समझ गया कि इसकी गलती नहीं है, ये सब स्त्री चरित्र है लेकिन मजबूरी में उसको फैसला सुनाना पड़ा । जज बोला –"जाओ, तुम्हारे दोनों हाथ काट दिये जायेंगे ।" जज की आज्ञा से सदनजी के दोनों हाथ काट दिये गए । हाथ से खून बह रहा है किन्तु वह चल पड़े जगन्नाथ पुरी की ओर क्योंकि वहाँ भगवान् का दर्शन करना है । कटे हाथों से खून बह रहा है लेकिन वह जा रहे हैं और कीर्तन कर रहे हैं – "गोविन्द हरे गोपाल हरे जय-जय प्रभु दीनदयाल हरे ।" पिछली रात को उस स्त्री ने सदन जी के सामने एक गीत गाया था – "आजा-आजा तू मेरे पास, मैं तेरी रानी हूँ ।" इन्होने उत्तर दिया – "नहीं आऊँ मैं तेरे पास, तू नार बिरानी है ।" वह स्त्री गाती रही – "रात रंगीली मैं भी रंगीली, तू रंग भरा रंगीला ।" लेकिन सदन जी के ऊपर उसके गाने का कोई असर नहीं पड़ा था क्योंकि हर समय वह कीर्तन करते थे । जिस समय वह गा रही थी, उस समय भी ये कीर्तन कर रहे थे । भगवान् का नाम मनुष्य को माया से बचाता है । देखो, आगे कीर्तन का चमत्कार होगा, ये कीर्तन करते जा रहे हैं और कटे हाथों से खून निकल रहा है । गोविन्द हरे गोपाल हरे जय-जय प्रभु दीनदयाल हरे । कीर्तन करते हुए धीरे-धीरे सदन जी जगन्नाथ जी के धाम में पहुँच गये । रास्ते में कुछ मिलता तो खा लेते थे । उनकी मृत्यु नहीं हुई, यह भगवान् की कृपा थी, नहीं तो दोनों हाथ कट जाने पर इतना अधिक खून निकलता है कि मृत्यु हो सकती थी लेकिन भगवान् की भक्ति के प्रभाव से सदन जी मरे नहीं । वह पैदल ही पुरी गये थे अतः वहाँ पहुँचने में इनको महीनों लग गये । उधर जगन्नाथजी ने मन्दिर के पुजारियों को स्वप्न में कहा कि मेरा एक भक्त आ रहा है, तुम लोग मेरी पालकी लेकर लाओ और उसको पालकी में बिठाकर यहाँ लाओ । प्रभु ने यह भी कहा कि उसकी पहचान यह है कि उसके दोनों हाथ कट चुके हैं और वह कीर्तन करते हुए आ

रहा है । प्रभु की आज्ञा से भगवान् जगन्नाथ जी की पालकी लेके पुजारी लोग चले और रास्ते में सबसे पूछते जाते थे – "अरे भाई ! वह कौन है, जिसके लिए प्रभु ने पालकी भेजी है ।" कोई कुछ नहीं बोलता था क्योंकि ऐसा कौन है जिसके लिए भगवान् पालकी भेजेंगे । सदनजी दूर से कीर्तन करते हुए आ रहे थे – राधिका ऽ ऽ ऽ ! ! ! राधिका ऽ ऽ ऽ ! ! ! राधिका ऽ ऽ ऽ ! ! ! राधिका ऽ ऽ ऽ ! ! ! पुजारियों ने देखा कि एक आदमी आ रहा है, उसके दोनों हाथ कटे हैं और वह कीर्तन कर रहा है तो वे समझ गए कि यही है वह भक्त, जिसके लिए जगन्नाथ जी ने पालकी भेजी है । पुजारियों ने सदन जी को रोका और बोले- "अरे सुनो भाई !" सदन जी खड़े हो गए और बोले – "क्या है भइया ?" पुजारी लोग बोले – "यहाँ आकर इस पालकी में बैठो ।" सदन जी बोले - "मैं तो पालकी में नहीं बैठूँगा, मैं हत्यारा हूँ, मैंने पाप किया है ।" पुजारी लोग बोले – "हम ये सब नहीं जानते, प्रभु की आज्ञा है, उन्होंने तुम्हारे लिए पालकी भेजी है ।" सदन जी ने पालकी में बैठने से मना किया किन्तु पुजारी लोग तो खा-पी के मस्त रहते हैं, उन्होंने सदन जी को पकड़ के पालकी पर बैठा दिया और बोले – "कैसे नहीं बैठेगा ।" अब बेचारे सदनजी क्या करते ? जब सदनजी मन्दिर पहुँचे तो वहाँ उन्होंने जगन्नाथ जी के दर्शन किए और लेटकर प्रभु को साष्टांग दंडवत करने लग गए । साष्टांग दंडवत में हाथ आगे रहते हैं– "पदाभ्यां कराभ्यां जानुभ्यां दोर्भ्यां च मंगलं दिवा । मनसा वचसा दृष्ट्या प्रणामो अष्टांग इतीर्तितः ॥" दोनों हाथ, दोनों पाँव, दोनों घुटने तथा वाणी और आँख, आठ अंग एक साथ भगवान् के आगे झुकते हैं । अब सदनजी के हाथ तो कट चुके थे, ऐसे में वह अष्टांग प्रणाम कैसे करते अतः उन्होंने केवल मन से सोचा कि हम हाथ से भगवान् को प्रणाम कर रहे हैं । इतना सोचना ही था कि दोनों हाथ जो कट चुके थे, भगवान् की असीम कृपा से फिर से निकल आये । अब तो बड़ा चमत्कार हुआ मन्दिर में, सब लोग समझ गए कि ये सिद्ध भक्त हैं । इसके बाद बड़े सम्मान के साथ उन्हें जगन्नाथजी का प्रसाद दिया गया और फिर वे जगन्नाथजी के मन्दिर में ही रुक गए । अब तो लोग उनके दर्शन करने के लिए मन्दिर में आने लगे कि अरे भाई कौन है सदन, जिसके कटे हुए हाथ फिर से निकल आये परन्तु सच्चा भक्त वही होता है, जो मान-सम्मान नहीं चाहता है और हम लोग मान-सम्मान चाहते हैं इसलिए भक्त नहीं हैं । हम सभी लोग भक्त नहीं हैं क्योंकि मान-सम्मान से प्रेम रखते हैं, सच्चे भक्त मान-सम्मान से प्रेम नहीं रखते, जैसे - मीराजी, तुलसीदासजी, कबीरदासजी । अपनी मान-प्रतिष्ठा बढ़ते देखकर सदनजी ने पुजारी जी से कहा - "भाई, मुझको अब जगन्नाथ पुरी में नहीं रहना है क्योंकि यहाँ बहुत से लोग आ करके मेरा सम्मान कर रहे हैं । मान-सम्मान से मैं घबराता हूँ ।" ये पुरी से चलने के लिए उठे, पुजारीजी ने रोका और कहा कि तुम यहीं रहो, जगन्नाथजी की ऐसी ही आज्ञा है लेकिन एक दिन सदनजी रात में उठे और चुपचाप वहाँ से चले गए । उन्होंने जगन्नाथ धाम छोड़ दिया यह सोचकर कि अब एकान्त में भगवान् को बुलाऊँगा क्योंकि एकान्त में ही ठीक से भजन होता है । इस प्रकार कीर्तन करते हुए सदनजी पुरी से चले गये ।

आस्थावान बाल-आराधक 'ज्योतिपंतजी'

श्रीबाबामहाराज के एकादशी-सत्संग (८/१/२००९) से संग्रहीत

पूज्यश्रीबाबामहाराज ने एकादशी के दिन मानमन्दिर के रासेश्वरी-विद्यालय के बच्चों एवं ब्रजवासियों व श्रोतागणों को सम्बोधित किया –

(श्रीबाबामहाराज के शब्दों में) -

आज विद्यालय के सभी बालक हमारे सामने उपस्थित हैं, इसलिए हम आज कथा एक बालक की सुनाते हैं क्योंकि वह बच्चों के काम (कल्याण) की है । सबको पता होना चाहिए कि अब बरसाने के विद्यालय में भी प्रह्लाद सभा शुरू हो गई है । (आपकी जानकारी के लिए बता दें कि मानमंदिर से प्रकाशित पुस्तक जिसका नाम 'प्रह्लाद सभा' है, इस पुस्तक में महापुरुषों जैसे - सूरदासजी, तुलसीदासजी, मीराबाईजी, कबीरदासजी आदि के पद हैं) कुछ दिन पहले बुद्धसेन विद्यालय, बरसाना के प्रधानाचार्य और वहाँ के विद्यालय के छात्र मानमन्दिर आये थे और जाते समय मानमन्दिर से प्रकाशित पुस्तक प्रह्लाद सभा भी ले गये । उन्होंने अपने विद्यालय में प्रह्लाद सभा कार्यक्रम शुरू कर दिया है क्योंकि सभी ने प्रतिज्ञा किया था । मानमन्दिर के विद्यालय 'रासेश्वरी विद्या मन्दिर' ने प्रह्लाद सभा के रूप में अत्यधिक प्रशंसनीय जनकल्याणकारी काम शुरू किया है, उसका समाज पर विलक्षण प्रभाव पड़ रहा है । गिड़ोह गाँव के ब्रजवासियों ने बताया कि वहाँ के विद्यालय में भी 'प्रह्लाद सभा' का पदगान होता है; अनेक विद्यालयों में यह प्रथा चल पड़ी है । वस्तुतः जिन विद्यालयों में भगवान् की भक्ति नहीं सिखायी जाती, वे विद्यालय 'वास्तविक विद्यालय' नहीं हैं । काकभुशुण्डिजी ने कहा था – "खरी सेव सुर धेनुहि त्यागी" अर्थात् जिस व्यक्ति में भक्ति नहीं है, वह तो गधी का दूध पीता है । सुरधेनु (कामधेनु गाय) का दूध तो वही पीता है, जिसमें भक्ति है । जिन विद्यालयों में भक्ति नहीं सिखायी जाती, वे चाहे कितने ऊँचे विद्यालय हैं, बड़ी बिल्डिंग है, पैसा है परन्तु वे विद्यार्थियों को गधी का दूध पिला रहे हैं । यह कथन काकभुशुण्डिजी ने कहा था, इसीलिए ब्रज में 'मानमन्दिर सेवा संस्थान' द्वारा जगह-जगह ऐसा प्रयत्न किया जा रहा है कि भौतिक शिक्षा रूपी गधी का दूध पीने वाले समाज को कामधेनु के दूध (भक्ति) का वितरण किया जा सके । अभी हम कुछ दिन पहले 'होडल' गये थे, वहाँ मानमन्दिर की ओर से एक प्रभात-फेरी सम्मेलन था । मानमन्दिर की ओर से यह प्रयास किया जा रहा है कि ब्रज के गाँव-गाँव में भक्ति फैले, इसी तारतम्य में जगह-जगह प्रभात फेरी सम्मलेन किये जा रहे हैं । ब्रज के कई गाँवों में प्रभात फेरियाँ चल रही हैं, ब्रजवासियों में बड़ी जाग्रति आयी है । हम चाहते हैं कि ब्रजमण्डल में जितने विद्यालय हैं, सभी विद्यालयों में सबसे पहले जो प्रार्थना होती है वह प्रह्लाद सभा (नित्य किसी एक महापुरुष के पद को सभी बच्चों द्वारा बोलना एवं उसका अर्थ बताया जाना) अर्थात् 'भक्तिमय पदगान' से शुरू हो, नहीं तो सभी स्कूलों के बच्चे केवल गधी का दूध पीते हैं । कामधेनु गाय का दूध तो केवल भगवान् की भक्ति ही है; धीरे-धीरे यह सच्ची बात अनजान लोगों तक पहुँच रही है । इसीलिए 'श्रीमानमन्दिर सेवा संस्थान' द्वारा सम्पूर्ण ब्रजमण्डल व देश-विदेश में भी प्रभात फेरी सम्मेलनों का आयोजन 'कथा-कीर्तन' के माध्यम से किया जा रहा है । भगवान् की भक्ति से ही संसार का कल्याण सम्भव है, नहीं तो सब लोग भक्ति के बिना मुर्दे हैं, निशाचर हैं । हम तो चाहते हैं कि ब्रज में क्या, भारतवर्ष में कोई भी गाँव ऐसा न बचे, जहाँ भगवन्नाम की फेरी न चलती हो । भारत के लाखों गाँवों में भगवन्नाम की फेरी चलनी चाहिए, जिससे संसार का कल्याण हो, इसीलिए अनेक स्थानों पर प्रभात फेरी सम्मेलनों का आयोजन किया जा रहा है । राधारानी वार्षिक ब्रजयात्रा, जो कि मानमन्दिर द्वारा संचालित ब्रज चौरासी कोस की निःशुल्क यात्रा है, जिसमें बंगाल, महाराष्ट्र, मध्यप्रदेश, उत्तरप्रदेश, बिहार आदि भारत के विभिन्न प्रदेशों से लोग आते हैं । मानमन्दिर की प्रेरणा से इन प्रान्तों में भी प्रभात फेरी शुरू हो गयी है । कलियुग में भगवन्नाम ही एकमात्र सहारा है । हम देख रहे हैं कि हिन्दू-संस्कृति का नाश हो रहा है । ऐसे भयंकर समय में हिन्दू-बालकों में भक्ति के संस्कार जागृत हों, इसलिए एक भक्त बालक की कथा सुना रहे हैं -

भक्त बालक ज्योतिपंतजी की कथा

एक बालक था, उसका नाम था ज्योतिपंत; ये सच्ची घटना है । महाराष्ट्र के सतारा जिले में बिटे नाम का एक गाँव है, वहाँ ज्योतिपन्त के माता-पिता रहते थे, उन्होंने अपने बच्चे को पढ़ाने के लिए बहुत प्रयास किया लेकिन ये (ज्योतिपंत) बुद्धिहीन थे, कुछ नहीं पढ़ पाये तो माँ-बाप बहुत दुःखी हुए, वे सम्पन्न परिवार के थे । ज्योतिपन्त के मामा महीपति-पेशवा (दक्षिण भारत में राजा को पेशवा कहा जाता था) के प्रधान मुनीम थे, इसलिए सुख-सम्पत्ति से सम्पन्न बहुत बड़ा इनका घर था । माँ-बाप ने देखा कि हमारा बालक तो पागल ही है, वह कुछ भी नहीं पढ़ा है, २० साल का हो गया और ऐसे ही घूमता रहता है, तो गुस्से में एक दिन पिता ने निकाल दिया कि इस घर से निकल जा । जब पिता ने निकाल दिया तो भगवान् की विचित्र लीला है, वह बालक घर से जंगल में चला गया । जिसके अन्दर थोड़ी-सी भी भक्ति है, वह भक्ति रूपी नाव भवसागर से पार कर देती है ।

देखो, बच्चो ! तुम लोग ये बात अच्छी तरह से समझो । ज्योतिपन्त थे तो पागल से लेकिन इतना जानते थे कि अगर भगवान् को बुलाया जाए तो वे सुनते अवश्य हैं, इतना उनको विश्वासपूर्वक 'दृढ़ ज्ञान' था और कुछ नहीं जानते थे; वह अकेले वन में चले गये, वहाँ श्रीगणेशजी का मन्दिर था (महाराष्ट्र में गणपति बाबा की बहुत उपासना चलती है), वहाँ जाकर वह रोने लग गये और रोते-रोते बोले – "हे गणपति बाबा ! मेरे माँ-बाप ने मुझे घर से निकाल दिया है, अब मैं दुनिया में कहाँ जाऊँ ? अब तो मैं तेरे दरवाजे ही मरूँगा ।" ६ दिन तक वह मन्दिर में भूखे-प्यासे रहकर गणेशजी को अपनी विनती सुनाने लगे -

मैं हूँ अनाथ बालक, मुझ पर दया दिखा दे ॥
मेरे पिता ने घर से एकदम मुझे निकाला;
मैं ऐसा हूँ अभागा, किस्मत का हूँ मैं काला;
आया तेरी शरण में, मुझ पर कृपा दिखा दे ।
मैं हूँ अनाथ बालक .....॥

संसार के सभी सहारों को छोड़कर वह भगवान् को बुला रहे हैं – **इतना बड़ा हुआ हूँ, मैं २० साल का हूँ;**
पढ़ पाया कुछ नहीं मैं, बुद्धि से हीन मैं हूँ;
जाऊँगा अब नहीं मैं, अपना मुझे बना ले ।
मैं हूँ अनाथ बालक.....॥

ज्योतिपन्त बोले – "हे नाथ ! मैं यहीं मर जाऊँगा लेकिन तेरा दर नहीं छोड़ूँगा ।" आखिर में छठवें दिन भी कुछ खाया-पिया नहीं, ऐसा लगा मानो प्राण चले जायेंगे, उन्होंने कहा - हे नाथ !

मर जाऊँगा यहीं मैं, भूखा तड़प-तड़प कर;
तू ही अनाथ का है, आया हूँ तेरे दर पर;
इस दीन को दयालु, अपना दरस दिखा दे ।
मैं हूँ अनाथ .....॥

६ दिन-रात बीत गये और मरने की हालत आ गयी । सातवें दिन उस प्रतिमा में से साक्षात् प्रकट होकर के गणेशजी ने दर्शन दिया । गणेश भगवान् का स्वरूप देखकर के ज्योतिपंत रोने लग गये (इनका नाम तो ज्योतिपंत था लेकिन बुद्धि में अँधेरा था) । कृपादृष्टिपूर्वक श्रीगणेशजी बोले – "हे बालक ! तू अपना मुँह खोल ।"

ज्योतिपंत ने मुँह खोला तो गणेशजी ने उसकी जीभ पर 'ॐ' लिख दिया, ऐसा करते ही ज्योतिपंत को सारी विद्या प्राप्त हो गयी और स्वप्न में महादेवजी ने दर्शन दिया; इसके बाद ज्योतिपंतजी घर लौटे, भगवान् की कृपा होने से उनका चेहरा बड़ा सुन्दर हो गया तथा मुख पर दिव्य तेज छा रहा था; जब वह घर लौटे तो वहाँ पर इनके मामा महीपतिजी आये थे जो पेशवा के प्रधान और सबसे बड़े मुनीम थे । इधर, इनके माँ-बाप भी दुःखी थे कि हमारा बेटा कहाँ चला गया ? इनके (ज्योतिपंत के) पिता से इनकी माँ कहती थी कि तुमने क्यों बच्चे को निकाल दिया, अगर उसे नहीं पढ़ना था तो नहीं पढ़ता, अब पता नहीं कहाँ भूखा मर रहा होगा ? (कितना भी खराब बेटा हो, माँ को तो अच्छा ही लगता है) इनकी माँ अपने पति से लगातार पुत्र-वियोग में दुःखित होकर कहती रही कि ऐसी पढ़ाई किस काम की जो लड़के का जीवन खत्म कर दे, तुमने उसे व्यर्थ ही निकाल दिया, अरे, दो रोटी खाता, घर पर ही बना रहता, अब न जाने मर गया होगा या जीवित होगा, कुछ भी पता नहीं है । इस प्रकार ज्योतिपंत की माँ रो रही थी, इसलिए उसको समझाने के लिए इनके मामा आये थे । वह समझा रहे थे कि बहन, धीरज रख, ज्योतिपंत मरा तो नहीं होगा, मेरा विश्वास है कि वह आयेगा । २० साल का लड़का है, इतनी जल्दी कैसे

मर जायेगा । इस प्रकार से ज्योतिपंत की रोती हुई माँ को उसके भाई समझा रहे थे । सभी लोग ज्योतिपंत की माँ को समझा रहे थे कि उतने में किसी ने दरवाजा खटखटाया । माँ बोली - 'कौन है ?' ज्योतिपंत - 'माँ, मैं ज्योति हूँ ।' माँ- 'अरे ! बेटा आ गया ।' उन्होंने दौड़कर के किवाड़ खोला और ज्योतिपंत से लिपट गई । माँ - 'अरे, आ गया, मेरा बेटा आ गया ।' मामा भी आश्चर्य करने लग गये और बोले - 'अरे ! इसका तो चेहरा ही बदल गया । सात दिन में क्या हो गया ?' तब तक ज्योतिपंत बोले (जिस प्रकार कोई बड़ा शिक्षित व्यक्ति बोलता है) – 'मामाजी ! प्रणाम' मामाजी सोचने लगे कि 'अरे ! ये तो पागल था, ये क्या, इस पागल में परिवर्तन कैसे आ गया ?' फिर उन्होंने पूछा- 'बेटा, तुम जीवित हो ?' ज्योतिपंत - 'हाँ, भगवान् की कृपा होती है तो मनुष्य का जीवन कभी नष्ट नहीं होता ।' मामाजी सोचने लगे - 'ओ हो !.. इस पागल को क्या हो गया, ये तो बड़े ज्ञान की बातें कर रहा है ।' ज्योतिपंत की बातें सुनकर सब चक्कर में पड़ गये । ज्योतिपंतजी के पिता भी आश्चर्यचकित होकर बोले - 'बेटा, भगवान् की कृपा से ही तुम बच गये ।' ज्योतिपंत – 'हाँ पिताजी ।' अब तो वह मंत्र बोलने लग गए, उन्होंने कहा – 'उपनिषद् में एक मंत्र है –

भीषास्माद्वातः पवते भीषोदेति सूर्यः –
भीषास्मादग्निश्चेन्द्रश्च मृत्युर्धावति पञ्चम ॥

(तैत्तिरीयोपनिषद् २/८)

भगवान् के भय से ही सारा संसार चल रहा है । उस भगवान् की कृपा के ही डर से सूर्य चलता है, चन्द्रमा चलता है, वायु चलती है और मौत भी डरती है ।' जब ज्योतिपंत ने यह वेद मंत्र बोला तो सबके होश गुम हो गए । पिताजी सोचने लगे - 'अरे, बाप रे बाप ! ७ दिन में ये कैसा चमत्कार हो गया, हमारा पागल बेटा तो अब वेद मंत्र बोलता है ।' माँ भी अपने बेटे के घर आने और उसके विलक्षण ज्ञान को देखकर उससे लिपट के रोने लग गई । माँ बोली – 'अरे ज्योति, तुझको ये ज्ञान कहाँ से मिल गया ?' मामा महीपति भी बोले- 'अरे भांजे, तू इतनी जल्दी ६ दिन में वेद कैसे पढ़ गया, ऐसा अद्भुत परिवर्तन तुझमें कैसे हो गया ? ज्योतिपंत ने पढ़े-लिखे प्रतिभाशाली की तरह जवाब दिया (अन्यथा पहले तो वह पागलों की भाषा में बोलता था), उसने कहा – "मामा जी ! मुझको घर से निकाल दिया गया तो मैं जंगल में चला गया । वहाँ जंगल में गणेशजी का एक मन्दिर था, वहाँ जाकर मैंने गणेशजी से कहा कि अब तो मैं आपके ही द्वार पर मरूँगा । मेरा संसार में कोई नहीं है, न मेरी माँ है, न मेरा बाप है । जो कुछ है वह आप ही हैं । फिर मैं भूखा-प्यासा मन्दिर में ही पड़ा रहा । ६दिन-६रात इसी तरह बीत गये तो मैं बेहोश हो गया । आदमी खायेगा-पियेगा नहीं तो बेहोश हो ही जायेगा । अचानक मैंने देखा कि मन्दिर में बहुत दिव्य प्रकाश हुआ और सामने गणेशजी खड़े हैं ।" गणेशजी ने पूछा - "अच्छा बेटा ! तू क्या चाहता है ?" मैंने कहा – "मुझे माँ-बाप ने घर से निकाल दिया है, मैं पढ़ा-लिखा नहीं हूँ । कृपा करके आप मुझे बुद्धि दें, ज्ञान दें ।" श्रीगणेशजी ने कहा कि मुँह खोल, तो मैंने मुँह खोल दिया तब उन्होंने मेरी जीभ पर 'ॐ' लिख दिया और उसके बाद से मुझको सभी वेद, शास्त्रों का ज्ञान अपने आप हो गया । महीपतिजी बोले - "वेद-शास्त्र का ज्ञान तो हो गया लेकिन कुछ दुनिया की पढ़ाई का भी ज्ञान हुआ कि नहीं ?" (सांसारिक व्यक्ति तो यही चाहता है । अभी तुम घर में जाकर अपने माता-पिता से कहो कि हम तो 'राम-राम' की पढ़ाई जानते हैं तो तुम्हारे पिताजी कहेंगे - अरे, अंग्रेजी में कितने नम्बर आए । राम-राम तो करता है, कहीं गणित में तो नहीं फेल हो गया । संसारी माँ-बाप तो यही कहेंगे ।) ज्योतिपंतजी ने कहा कि संसार की ऐसी कोई पढ़ाई नहीं है कि जिसमें मैं फेल हो जाऊँ । मामाजी बोले - "अच्छा चलो, तुम हमारा काम कर दो तब हम तुम्हारी बात पर विश्वास कर सकते हैं ।" राजा का काम था, 'महीनों का हिसाब-बही खाता' उन्हें अकेले ही देखना पड़ता था क्योंकि केवल यही ईमानदार थे । अकेले होने के कारण इन्होंने सोचा था कि हिसाब-किताब में कई महीने लगेंगे । इन्होंने सोचा था कि इतना बड़ा काम अकेले कैसे हो पायेगा ? रात-दिन भी करेंगे तो भी महीनों लगेंगे । अतः महीपति मामा ने ज्योतिपंत से कहा - "बेटा, ये हमारा हिसाब-किताब का महीनों का कार्य है, क्या तुम इसमें १०-२० दिन तक मदद कर सकते हो ?" ज्योतिपंतजी - "हाँ, आप सभी कमरे से बाहर चले जाइये और किवाड़ बन्द कर दीजिये, थोड़ी देर बाद आइयेगा ।" सब लोग बाहर चले गये तथा

किवाड़ बन्द कर दिया । ज्योतिपंतजी ने गणेशजी को याद किया और बोले - "हे नाथ ! आपने ही मुझे विद्या-बुद्धि प्रदान की है, अतः इस काम में भी मेरी मदद करें ।" ऐसा कहकर के उन्होंने कलम उठाया और थोड़ी देर में ही सब हिसाब बराबर कर दिया । थोड़ी देर बाद लोगों ने किवाड़ खोला । ज्योतिपंतजी - "लो मामाजी !" मामाजी ने देखकर के सोचा - ओहो...!! महीनों का काम और अक्षर इतने सुन्दर हैं कि कोई दुनिया में ऐसा लिख नहीं सकता । मामाजी, पेशवा साहब के पास गए और साथ में ज्योतिपंतजी को भी ले गए । अब तो इनकी पाग बँध रही थी और बढ़िया पटुका भी धारण किया था । दूर से ही राजा साहब ने इन्हें देखा और सोचा - "अरे ! ये महीपतिजी तो पागल को भी साथ में ला रहे हैं, आज तो इस पगले को भी पटुका पहना रखा है ।" राजा को क्या पता कि अब यह पागल नहीं रहा । मामाजी - "पेशवा साहब !" पेशवा - "महीपतिजी ! आप राज दरबार में आ गए लेकिन हमारा जो महीनों का काम था, उसका क्या हुआ ?" मामाजी - "मैं क्या करूँगा, मेरे भाँजे ने कर दिया है ।" राजा ने देखा कि ये तो वही पागल है । पेशवा - "अच्छा ।" मामाजी - "हाँ, इन्हीं ने ये काम किया है, ये ज्योतिपंतजी हैं, (इनके नाम के साथ 'जी' लगाया, नहीं तो पहले ज्योति-ज्योति चिल्लाते थे) इन्हीं ने यह काम किया है, ये देखिए – 'अक्षर' ।" राजा ने आश्चर्य से देखा कि सभी 'अक्षर' सुनहले बने हैं । पेशवा (राजा) ने तुरंत ज्योतिपंतजी को पुरंदर किला का अधिकारी बना दिया । कहाँ तो पागल थे और कहाँ ७ दिन के भजन के बाद ८वें दिन राजा के दरबार में गए और पुरंदर किला के मालिक बन गए । देखो, भजन ऐसी महत्त्वपूर्ण चीज होती है । ज्योतिपंतजी ने पुरन्दर किला में कुछ दिन तक काम किया, उसके बाद एक दिन महादेवजी ने स्वप्न में इनसे कहा कि अब तुम काशी चले जाओ और वहाँ तप करो क्योंकि भगवान् की भक्ति अधिक महत्त्वपूर्ण है । महादेवजी की आज्ञा से ज्योतिपंतजी काशी चले गए और ६ महीने तक वहाँ तपस्या किया । वहाँ भागवत के रचयिता व्यासजी प्रकट हुए और उन्होंने ज्योतिपंतजी के हाथ में भागवत प्रदान की और कहा कि तुम इसका मराठी भाषा में अनुवाद करो । (महाराष्ट्र में मराठी भाषा बोली जाती है ।) व्यासदेवजी की कृपा से ज्योतिपंतजी को कृष्णभक्ति भी प्राप्त हो गई, इन्होंने मराठी भाषा में छंदों में भागवतजी की टीका लिखी है, जो आजकल प्राप्त नहीं है लेकिन ज्योतिपंतजी का नाम आज भी महाराष्ट्र में अमर है । यह कथा सच्ची है और इससे यह शिक्षा मिलती है कि जो भी बालक-बालिका भजन करते हैं, उसको भक्ति और भगवान् की कृपा अवश्य मिलती है ।

यदि मनुष्य को भगवान् का अनुभव नहीं है परन्तु अंतिम समय उनका स्मरण करता है तो उसे निश्चित ही भगवत्प्राप्ति हो जाएगी ।

अनन्याश्रित भक्त श्रीदामापन्तजी

श्रीबाबामहाराज द्वारा कथित एकादशी-सत्संग (२७/११/२००५) से संग्रहीत

दक्षिण भारत में मंगलबेड़ा एक रियासत थी, वहाँ श्री दामापन्त जी नामक एक भक्त हुए हैं, उस रियासत के दामाजी शासक थे, लेकिन बेदर के मुसलमान बादशाह के आधीन इनकी रियासत थी, इसलिए बादशाह के लिए इनको टैक्स देना पड़ता था क्योंकि उन दिनों मुसलमानों ने दक्षिण भारत को जीत रखा था और उन मुसलमानों की राजधानी गोलकुंडा थी । एक बार वहाँ भीषण अकाल पड़ा, जिसके कारण वहाँ बहुत दिनों तक वर्षा नहीं हुई, वर्षा न होने से अन्न उत्पन्न नहीं हुआ । उस अकाल को लोगों ने 'दुर्गा देवी' नाम दिया था । प्राचीनकाल में यातायात के साधन ट्रक, गाड़ियाँ आदि नहीं थीं कि सामान पहुँच जाये । आजकल तो हवाई जहाज से भी सामान पहुँच जाता है । प्राचीन समय में जहाँ अकाल पड़ता था, उपयुक्त साधनों के न होने से वहाँ कोई सहायता नहीं पहुँच पाती थी । उस समय अकाल जब पड़ा तो लोगों ने पेड़ों की छाल और पत्तों को खा-खाकर जीवन-निर्वाह किया । श्रीदामापन्तजी बड़े ही दयालु भक्त थे, इन्होंने सारा भंडार खोल दिया कि प्रजा का उदर-पोषण हो जाए । मन्त्रियों ने कहा कि आपको मुसलमान बादशाह का डर नहीं है क्या ? दामापन्तजी बोले कि वह मुसलमान बादशाह मुझे मार

देगा और क्या करेगा, ये प्रजा तो भूखों मर रही है, भण्डार खोलने से यदि हजारों के प्राण बच जायें और मैं अकेला समाप्त हो जाऊँ तो कोई बात नहीं है । इस प्रकार श्रीदामाजी ने सारा भंडार लुटा दिया और इधर बेदर के बादशाह के पास खबर पहुँच गयी कि दामापन्त ने भंडार खोल दिए हैं और सब कुछ हिन्दुओं को लुटा दिया है । बादशाह ने सैकड़ों सिपाही भेजे और उन्हें आदेश दिया कि दामापन्त को पकड़ के लाओ । जब सिपाही गये, उस समय दामापन्त भजन में बैठे थे । सिपाहियों ने दामापन्त जी के महल का दरवाजा खटखटाया, उनकी स्त्री बड़ी सती थी, उनमें सिपाहियों को रोकने की हिम्मत तो थी नहीं क्योंकि वह संख्या में बहुत अधिक थे लेकिन ये सती थीं और सती का तेज अलग होता है । ये अकेले ही गयीं और सिपाहियों से कहा – "अभी तुम हमारे पति को नहीं छू सकते हो, अभी वे भजन में हैं इसलिए तुम लोग कुछ देर रुको ।" उनकी बात और उनका तेज ऐसा था कि सिपाही रुक गये और बोले – "ठीक है ।" जब दामापन्तजी भजन से उठे तो सिपाहियों ने उनको पकड लिया और बोले कि आपको बादशाह ने बुलाया है क्योंकि आपने सरकारी खजाना लुटा दिया है । दामापन्तजी बोले – "हाँ, चलो हम चलते हैं ।" राजमहल से जब वह चले, तब सिपाहियों ने कहा कि आपको हथकड़ी पहननी पड़ेगी क्योंकि ऐसा बादशाह का हुक्म है । दामापंतजी बोले – "ठीक है, पहना दो ।" सिपाहियों ने दामाजी के हाथों में हथकड़ी डाल दिया और प्रजा रोती रही । मुसलमानी शासन के समय में कोई कुछ कर नहीं सकता था । सब रो रहे थे लेकिन वह चले गये । गोलकुंडा के रास्ते में पंडरपुर पड़ता है, पंडरीनाथ भगवान् वहाँ के विख्यात ठाकुर हैं, जैसे ब्रज में प्राचीनकाल में श्रीनाथ जी प्रसिद्ध थे । सिपाहियों से दामापन्तजी ने कहा कि हम एकबार पंडरीनाथ भगवान् का दर्शन करना चाहते हैं । सिपाहियों ने कहा – "ठीक है, आप दर्शन कर लें ।" सिपाही भी जानते थे कि इन्होंने कोई बुरा काम तो किया नहीं है जो ये भागने की कोशिश करेंगें । अतःसिपाहियों ने दामाजी को दर्शन करने की अनुमति प्रदान कर दी । दामापन्तजी भगवान् के सामने मंदिर में गये और कीर्तन करते हुए नाचने लग गये । वह जानते थे कि बादशाह बड़ा क्रूर है, मुझको अवश्य फाँसी की सजा देगा । अतः उन्होंने मंदिर में भगवान् से कहा कि हे नाथ ! मैं आपका आखरी दर्शन कर रहा हूँ, अब वापस कभी नहीं आ पाउँगा, ऐसा कहते हुए वह कीर्तन करने लगे –

गोपाल कन्हैया प्यारे, ओ मोहन मुरली वारे ।
राधा के प्राण प्यारे, ओ मोहन मुरली वारे । तू आजा नन्द दुलारे, दर्शन दे मेरे प्यारे ॥
ओ मोर पंख सिर धारे, कानन में कुंडल वारे । गोपाल कन्हैया प्यारे ....

कीर्तन करते-करते दामाजी प्रेमावेश में गिर पड़े और रोते हुए प्रभु से बोले कि हे दीनबंधु ! अब मैं जा रहा हूँ, जीवन तो मेरा नहीं बचेगा लेकिन आपका दर्शन हो गया, ये बहुत प्रसन्नता की बात है और ऐसा कहते हुए चल पड़े वहाँ से, उनके हाथों में हथकड़ी थीं । इधर श्यामसुंदर ने एक चमार का वेष बनाया और काली कमली ओढ़कर बादशाह के दरबार में पहुँचे । वहाँ पहुँचने पर द्वार पर खड़े सिपाहियों से बोले कि मुझको दामापन्त जी ने भेजा है । पहले तो सिपाही उनका मैला कपड़ा देखकर उन्हें फटकार रहे थे लेकिन जब उन्होंने कहा कि दामापन्तजी ने बादशाह के लिए सन्देश भिजवाया है कि तुम अपना पैसा ले लो जितना भी है, मैं सब कुछ चुका दूँगा । सिपाहियों को बड़ा आश्चर्य हुआ कि यह मजदूर ऐसा कह रहा है । उसे लेकर वे बादशाह के पास गये तो उसने देखा कि काला कंबल ओढ़े हुए एक व्यक्ति कह रहा है कि हम दामापन्त जी के सेवक हैं, आपके भण्डार का जितना पैसा है, आप ले लीजिये । बादशाह ने पूछा कि तुम्हारा नाम क्या है तो उसने कहा – "बिट्ठू चमार ।" यह विट्ठल भगवान् का ही नाम है, उन्होंने अपना नाम इस प्रकार बताया कि कोई पहचान भी नहीं पाया लेकिन जब उस कंबल में से थोड़ा-सा मुँह दिखाया तो वह बादशाह आश्चर्य से देखता रह गया और सोचने लग गया कि इतना सुन्दर कहीं चमार होता है, ऐसा रूप तो मैंने कभी देखा ही नहीं, फिर बादशाह बोला – "कहाँ है तेरे पास भण्डार के रुपये?" तो बिट्ठू ने एक छोटी-सी थैली दिया । बादशाह हँस गया और बोला कि इतनी-सी थैली से भण्डार का दाम चुक जाएगा ? बिट्ठू बोला – "हाँ, इसी से तुम्हारा दाम चुक जायेगा ।" बादशाह फिर बोला – "जाओ और

इस थैली को खजांची को दे दो ।" सिपाही उसे ले गये, साथ में बिट्टू चमार भी गया । खजांची ने पूछा कि क्या लाया है ? बिट्टू बोला – "थैली है, इसे ले लो ।" खजांची बिट्टू चमार से बोला – "लाखों मुद्राएँ जिन्हें तुम लोगों ने नष्ट कर दिया है, वे एक थैली से कैसे चुक जायेंगी ?" बिट्टू बोला – "अरे, तुम इसमें से लेकर के तो देखो, फिर जब तुम्हारा नहीं चुके तो बताना ।" खजांची ने एक बहुत बड़ा परात लिया और उसमें छोटी-सी थैली उल्टी किया तो वह परात पूरी भर गयी लेकिन थैली उतनी की उतनी ही थी । सिपाही अत्यंत आश्चर्यचकित होकर देखने लग गये और बोले – "ये क्या चक्कर है कि ये थैली तो खाली हुई नहीं और परात पूरी भर गई, फिर वे बोले – "अच्छा और दूसरा पात्र लाओ ।" तो बड़ा कढ़ाव लाया गया और उसमें थैली उल्टी की गई तो सम्पूर्ण कढ़ाव भर गया किन्तु थैली वैसी की वैसी भरी रही । सब सिपाही दौड़े बादशाह के पास और बोले – "हुजूर ! उस चमार में जाने क्या चमत्कार है ? उसने तो बड़े-बड़े कढ़ाव भर दिये हैं, आपके भंडार का तो बहुत अधिक धन चुका दिया है ।" बादशाह बोला – "अच्छा ! दामापन्त का सेवक ऐसा है ? अरे ! मुझसे बड़ी भूल हुई । दामापन्तजी को कारागार से छुड़ाकर व हथकड़ी हटाकर के लाओ, ये तो हमसे बहुत गलत काम हुआ है । सब सिपाही दौड़े दामापन्त जी के पास और उनकी हथकड़ी काटी गई, कैदखाने से मुक्त कर दिया गया । जब बादशाह के पास उन्हें लाया गया तो बादशाह कहने लगा – "मैं आपका गुनहगार हूँ दामापन्त जी, आपने तो जाने कितना धन हमको दे दिया लेकिन आपका सेवक कहाँ है ?" दामापन्त जी बोले – "मेरा सेवक कौन है.....! अरे !! मैंने आपको धन कहाँ दिया है ?" बादशाह बोला – "अरे ! वही जो अभी आया था ।" दामाजी ने पूछा – "कौन आया था ?" बादशाह ने कहा – "उसके शरीर पर काली कमली थी और वह बड़ा सुंदर था, उसने कहा था कि मैं बिट्टू चमार हूँ । अरे ! वह बिट्टू कहाँ है ? एक बार फिर से दिखाओ, कैसी मतवाली आँखें थी उसकी, बस एक बार फिर से उसे दिखा दो ।" दामापन्त जी समझ गये कि ये तो श्यामसुंदर की लीला है, न तो मेरा कोई बिट्टू चमार सेवक है, न मेरे पास कोई पैसा-धेला है । दामाजी बोले – बादशाह ! मैं उस बिट्टू को नहीं दिखा सकता । बादशाह ने पूछा – "क्यों ?" दामापन्त जी बोले – "क्योंकि वह बिट्टू मेरा सेवक नहीं था ।" बादशाह ने पूछा – "फिर कौन था वह ?" दामापन्त जी बोले – "तुम नहीं जान सकते, वह वही था जिसका मैं दर्शन करने गया था ।" लेकिन बादशाह तो पागल हो गया और पुकारने लगा - **कहाँ गया, कहाँ गया, वो बिट्टू प्यारा कहाँ गया ?**

काली कमली वाला बिट्टू, हाथ लकुटिया वाला बिट्टू, रुपया देकर चित्त चुराकर, मुझको घायल कर गया ।

बादशाह बोला – "दामा जी ! मैं बिट्टू के बिना जी नहीं सकता हूँ ।" सारे वजीर आश्चर्य कर रहे हैं कि क्या हो गया इस बादशाह को । बादशाह बोला – **उसके बिना जिऊँ मैं कैसे, उसके बिना रहूँ मैं कैसे ।**

कोई पीर न समझे मेरी मैं तड़पता रह गया । कहाँ गया तू मुझे बता दे, बिट्टू को तू मुझे दिखा दे ।

(अरे) श्रीदामा मैं चेरा तेरा प्राण प्यारा कहाँ गया । तेरा ही वह सेवक प्यारा, मेरे नैनों का वह तारा,

मेरे प्राण बचा ले दामा, मैं सेवक तेरा हुआ ॥ कहाँ गया.....

दामापन्त जी रोने लग गये और बोले – "बादशाह ! वह मेरे हाथ में नहीं है, वह तो तीनों लोकों का स्वामी है, आया और चला गया, उसको बुलाने का यही एक रास्ता है कि हम सभी लोग उस भगवान् का नाम लें, कीर्तन करें, वह अपनी इच्छा से आता है और अपनी इच्छा से जाता है और उसका कोई रास्ता नहीं है ।"

गौ–सेवकों की जिज्ञासा पर माताजी गौशाला का Account number दिया जा रहा है –

SHRI MATAJI GAUSHALA,
GAHVARVAN,BARSANA, MATHURA
Bank – Axis Bank Ltd ,
A/C – 915010000494364
IFSC – UTIB0001058 BRANCH – KOSI KALAN,
MOB. NO. – 9927916699

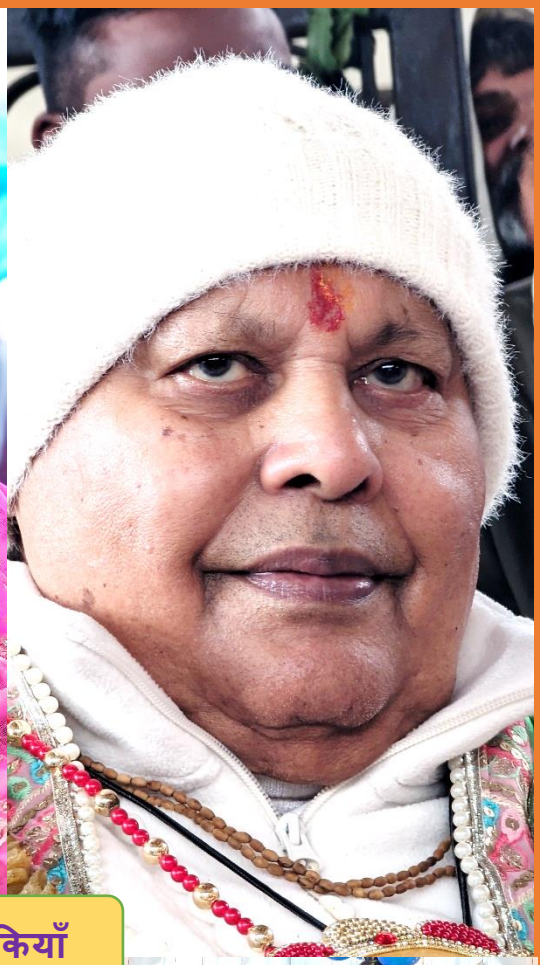

पूज्यश्री बाबा महाराज के जन्मोत्सव की झलकियाँ

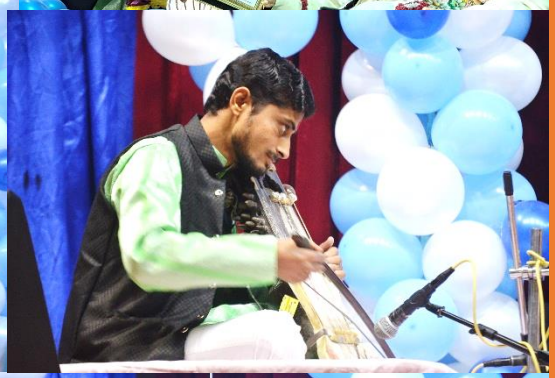

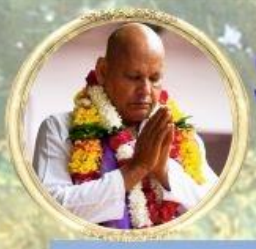

श्री मानमंदिर

प्रस्तावित पुनरुद्धार रेखांकित चित्र

३६

ACCOUNT NAME
SHRI MAAN BIHARI
LAL MANDIR SEVA
ACCOUNT NUMBER: 59109927338666
IFSC CODE: HDFC0000268
BANK: HDFC BANK LTD
BRANCH: BSA COLLEGE, MATHURA

मान मंदिर लीला स्थल श्रीराधाकृष्ण की लीला स्थलियों में सबसे प्रमुख है
इस अति विलक्षण लीला स्थली के पुरुद्धार कार्य में जुड़ कर धाम सेवा का दुर्लभ लाभ प्राप्त करें

श्रीमानमंदिर सेवा संस्थान ट्रस्ट, गह्वरवन, बरसाना (मथुरा)
www.maanmandir.org; संपर्क :9927338666

QR कोड

RNI REFERENCE NO. 1313397- REGISTRATION NO. UP BIL-2017/72945-TITLE CODE UP BIL-04953 POSTAL REGD.NO. 093/2024-2026
श्री मान मन्दिर सेवा संस्थान के लिए प्रकाशक/मुद्रक एवं संपादक राधाकांत शास्त्री द्वारा गुप्ता ओफ़्सेट प्रिंटर्स A- 125/1 , wazipur industriyal area, new delhi- 52 से मुद्रित एवं मान मन्दिर सेवा संसथान, गह्वरवन, बरसाना, मथुरा (उ.प्र.) से प्रकाशित [AGRA/WPP-12/2024-2026 AT 31.12.26]